सूरह बनी इस्राईल

तम्हीदी कलिमात

सूरह बनी इस्राईल और सूरतुल कहफ़ दोनों मिलकर एक हसीन व जमील जोड़ा बनाती हैं। क़ुरान अज़ीम के वस्त (बीच) में यह दो सूरतें हिकमते क़ुरानी के दो अज़ीम ख़जाने हैं। इन दोनों के माबैन (दरम्यान) कई हवालों से मुशाबिहत भी पाई जाती है और कई पहलुओं से इनकी आपस में निस्बते ज़ौजियत भी ज़ाहिर होती है। यह दोनों सूरतें किस-किस ऐतबार से complementary हैसियत रखती हैं यह बात इनके मुताअले के दौरान वाज़ेह हो जायेगी, ताहम इस सिलसिले में अहम निकात दर्ज ज़ेल हैं:

(1) सूरह बनी इस्राईल का आग़ाज़ अल्लाह की तस्बीह {..سُبۡحٰنَ الَّذِیۡۤ} से होता है, जबकि सूरतुल कहफ़ भी अल्लाह की तहमीद {.. اَلۡحَمۡدُ لِلّٰہِ الَّذِیۡۤ} से शुरू होती है। इन दोनों कलिमात का बाहमी ताल्लुक़ इस हदीस से वाज़ेह होता है जिसमें हुज़ूर अक़दस ﷺ ने फ़रमाया है: ((اَلتَّسۡبِیۡحُ نِصۡفُ الۡمِیۡزَانِ وَالۡحَمۡدُ لِلّٰہِ یَمۡلَؤُہٗ))[16] "तस्बीह निस्फ़ मीज़ान है और अलहम्दुलिल्लाह उसे भर देता है।" यानि सुब्हान अल्लाह कहने से मअरफ़ते खुदावंदी की मीज़ान आधी हो जाती है और अलहम्दु-लिल्लाह कहने से यह मीज़ान मुकम्मल तौर पर भर जाती है। गोया यह दोनों कलिमात मिल कर किसी इंसान के दिल में अल्लाह तआला की मअरफ़त के असासे की तक्मील करते हैं। आगे चल कर अल मुसब्बिहात (वो सूरतें जिनका आग़ाज़ अल्लाह की तस्बीह से होता है) के मुताअले के दौरान इस मज़मून पर तफ़सील से रौशनी डाली जायेगी।

(2) सूरह बनी इस्राईल की पहली आयत में मज़कूर है कि "अल्लाह अपनें बन्दे को ले गया" जबकि सूरतुल कहफ़ की पहली आयत में फ़रमाया कि "अल्लाह ने अपने बन्दे पर किताब उतारी।" गोया दोनों मक़ामात की बाहम मुतलाज़िम (reciprocal) निस्बत है।

(3) दोनों सूरतों की इब्तदाई आयात में नबी अकरम ﷺ के लिए रसूल के बजाय अब्द का लफ़्ज़ इस्तेमाल हुआ है।

(4) सूरह बनी इस्राईल की आखरी दो आयात का आग़ाज़ लफ़्ज "क़ुल" से होता है और इसी तह सूरतुल कहफ़ की आखरी दो आयात भी लफ़्ज़ "क़ुल" से शुरू होती हैं। नेज़ इन दोनों मक़ामात की दो-दो आयात के मज़ामीन में बाहम मुतलाज़िम (reciprocal) निस्बत है।

(5) यह दोनों सूरतें रेल के डिब्बों की तरह आपस में जुड़ी हुई (inter locked) हैं। वो इस तरह कि सूरह बनी इस्राईल की आख़री आयत एक हुक्म पर ख़त्म हो रही है: {....وَقُلِ الۡحَمۡدُ لِلّٰہِ الَّذِیۡ} "और कहिये कि कुल हम्द और कुल तारीफ़ उस अल्लाह के लिए है...." जबकि सूरतुल कहफ़ की पहली आयत के मज़मून से यूँ लगता है जैसे यह इस हुक्म की तामील में नाज़िल हुई है: {....اَلۡحَمۡدُ لِلّٰہِ الَّذِیۡۤ}

मज़मून और मौज़ू के ऐतबार से सूरह बनी इस्राईल का पहला रुकूअ बहुत अहम और अज़ीम है। इस रुकूअ में बनी इस्राईल की तारीख़ के उन चार अदवार का तज़किरा है जो हुज़ूर ﷺ की बेअसत तक गुज़र चुके थे। यहाँ बनी इस्राईल की दो हज़ार सालह तारीख़ को चार आयात के अंदर समो कर गोया उम्मते मुस्लिमा के लिये एक आईना फ़राहम कर दिया गया है। इस आईने को सामने रख कर हम अपने माज़ी, हाल और मुस्तक़बिल का जायज़ा ले सकते हैं। इसकी वज़ाहत इस हदीसे नबवी ﷺ में मिलती है जिसमें हुज़ूर ﷺ ने फ़रमाया: ((لَیَاۡتِیَنَّ عَلٰی اُمَّتِیۡ مَا اَتٰی عَلٰی بَنِیۡۤ اِسۡرَآءِیۡلَ حَذۡوَ النَّعۡلِ بِالنَّعۡلِ---))[17] "मेरी उम्मत पर भी वो तमाम हालात वारिद होकर रहेंगे जो बनी इस्राईल पर वारिद हुए, बिल्कुल उसी तरह जैसे एक जूती दूसरी जूती के मुशाबेह होती है...." इस हदीस में जूती के दोनों पाँवों की मुशाबिहत की यह मिसाल उस अटल हक़ीक़त की तरफ़ इशारा करती है कि उरूज व ज़वाल के जो चार अदवार बनी इस्राईल पर गुज़र चुके हैं

बिल्कुल ऐसे ही चार अदवार उम्मते मुस्लिमा पर भी वारिद होंगे। इस पहलू से देखा जाये तो सूरह बनी इस्राईल की इन चार आयात (4 से 7) में इल्म व मअरफ़त और मालूमात का एक ख़ज़ाना पोशीदा है, जबकि मज़कूरा बाला हदीस इस ख़ज़ाने की चाबी है। मुझे अल्लाह तआला के फ़ज़ल और उसकी तौफ़ीक़ से इस चाबी की मदद से इस ख़ज़ाने तक रसाई मिली है, जिसके नतीजे में मेरे लिए इन बेश बहा इल्मी व तारीख़ी मालूमात को ज़ब्त तहरीर में लाना मुमकिन हुआ है। चुनाँचे इस मौज़ू पर मेरा एक मुख़्तसर किताबचा "तंज़ीमे इस्लामी का तारीख़ी पस मंज़र" के नाम से और एक मुफ़स्सल किताब "साबक़ा और मौजूदा मुसलमान उम्मतों का माज़ी, हाल और मुस्तक़बिल" के उन्वान से दस्तयाब हैं।
इन दोनों मतबुआत के इंग्लिश तराजिम भी Rise and Decline of the Muslim Ummah और Lessons from History के उन्वानात से तबअ होते हैं। (इस मौज़ू को समझने के लिये इन कुतुब का मुताअला मुफ़ीद होगा।)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

आयात 1 से 10 तक

سُبْحٰنَ الَّذِيْٓ اَسْرٰى بِعَبْدِهٖ لَيْلًا مِّنَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اِلَى الْمَسْجِدِ الْاَقْصَا الَّذِيْ
بٰرَكْنَا حَوْلَهٗ لِنُرِيَهٗ مِنْ اٰيٰتِنَا ۭ اِنَّهٗ هُوَ السَّمِيْعُ الْبَصِيْرُ ① وَاٰتَيْنَا مُوْسَى الْكِتٰبَ
وَجَعَلْنٰهُ هُدًى لِّبَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ اَلَّا تَتَّخِذُوْا مِنْ دُوْنِيْ وَكِيْلًا ② ذُرِّيَّةَ مَنْ حَمَلْنَا
مَعَ نُوْحٍ ۭ اِنَّهٗ كَانَ عَبْدًا شَكُوْرًا ③ وَقَضَيْنَآ اِلٰى بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ فِي الْكِتٰبِ
لَتُفْسِدُنَّ فِي الْاَرْضِ مَرَّتَيْنِ وَلَتَعْلُنَّ عُلُوًّا كَبِيْرًا ④ فَاِذَا جَاۗءَ وَعْدُ اُوْلٰىهُمَا
بَعَثْنَا عَلَيْكُمْ عِبَادًا لَّنَآ اُولِيْ بَاْسٍ شَدِيْدٍ فَجَاسُوْا خِلٰلَ الدِّيَارِ ۭ وَكَانَ وَعْدًا
مَّفْعُوْلًا ⑤ ثُمَّ رَدَدْنَا لَكُمُ الْكَرَّةَ عَلَيْهِمْ وَاَمْدَدْنٰكُمْ بِاَمْوَالٍ وَّبَنِيْنَ وَجَعَلْنٰكُمْ
اَكْثَرَ نَفِيْرًا ⑥ اِنْ اَحْسَنْتُمْ اَحْسَنْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ ۣ وَاِنْ اَسَاْتُمْ فَلَهَا ۭ فَاِذَا جَاۗءَ وَعْدُ
الْاٰخِرَةِ لِيَسُوْۗءٗا وُجُوْهَكُمْ وَلِيَدْخُلُوا الْمَسْجِدَ كَمَا دَخَلُوْهُ اَوَّلَ مَرَّةٍ وَّلِيُتَبِّرُوْا
مَا عَلَوْا تَتْبِيْرًا ⑦ عَسٰى رَبُّكُمْ اَنْ يَّرْحَمَكُمْ ۚ وَاِنْ عُدْتُّمْ عُدْنَا ۘ وَجَعَلْنَا جَهَنَّمَ
لِلْكٰفِرِيْنَ حَصِيْرًا ⑧ اِنَّ هٰذَا الْقُرْاٰنَ يَهْدِيْ لِلَّتِيْ هِيَ اَقْوَمُ وَيُبَشِّرُ الْمُؤْمِنِيْنَ
الَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ الصّٰلِحٰتِ اَنَّ لَهُمْ اَجْرًا كَبِيْرًا ⑨ وَّاَنَّ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ
بِالْاٰخِرَةِ اَعْتَدْنَا لَهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ⑩

आयत 1

سُبْحٰنَ الَّذِيْٓ اَسْرٰى بِعَبْدِهٖ لَيْلًا مِّنَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اِلَى الْمَسْجِدِ الْاَقْصَا

"पाक है वह ज़ात जो ले गई रातों-रात अपने बंदे (ﷺ) को मस्जिदे हराम से मस्जिदे अक़्सा (दूर की मस्जिद) तक"

यह रसूल अल्लाह ﷺ के सफ़र-ए-मैराज के पहले मरहले की तरफ इशारा है जो मस्जिदे हराम (मक्का मुकर्रमा) से मस्जिदे अक़्सा (बैतुल मक़दस) तक के ज़मीनी सफ़र पर मुश्तमिल था। "सुब्हान" तन्ज़िये का कलिमा है, यानि अल्लाह तआला की ज़ात हर नुक़्स व ऐब से पाक व मन्ज़ा है। इस कलिमे से बात का आग़ाज़ करना ख़ुद दलालत करता है कि यह कोई बहुत बड़ा खर्क़े आदत वाक़िया था जो अल्लाह तआला की ग़ैर महदूद क़ुदरत से रू नुमा हुआ। यह महज़ एक रुहानी तजुर्बा ना था, बल्कि एक जिस्मानी सफ़र और ऐनी मुशाहिदा था जो अल्लाह तआला ने नबी अकरम ﷺ को कराया।

الَّذِيْ بٰرَكْنَا حَوْلَهٗ

"जिसके माहौल को हमने बा-बरकत बनाया"

इस इलाक़े की बरकत दुनियवी ऐतबार से भी है और रूहानी ऐतबार से भी। दुनियवी ऐतबार से यह इलाक़ा बहुत ज़रख़ैज़ है और यहाँ की आब-ओ-हवा ख़ुसूसी तौर पर बहुत अच्छी है। रूहानी ऐतबार से देखें तो यह इलाक़ा बहुत से जलीलुल क़द्र अंबिया अलै. का मसकन रहा है और हज़रत इब्राहीम अलै. समेत बहुत से अंबिया यहाँ मदफ़ून हैं। हैकल-ए-सुलेमानी बनी इस्राईल की मरकज़ी इबादत गाह थी। इस लिहाज़ से ना मालूम अल्लाह के कैसे-कैसे नेक बंदे किस-किस अंदाज़ में यहाँ इबादत करते रहे होंगे। इसके अलावा बैतुल मक़दस को बनी इस्राईल के क़िब्ले की हैसियत भी हासिल थी। चुनाँचे माद्दी व रूहानी दोनो ऐतबार से इस इलाक़े को अल्लाह तआला ने बहुत ज़्यादा बरकतों से नवाज़ा है।

सफ़र-ए-मैराज के पहले मरहले में रसूल अल्लाह ﷺ को मक्का मुकर्रमा से येरुशलम ले जाया गया, वहाँ बैतुल मक़दस में तमाम अंबिया की अरवाह को जमा किया गया, उन्हें जसद (जिस्म) अता किए गये (हमारे हवास इस कैफ़ियत का इदराक करने से क़ासिर हैं) और वहाँ हज़ूर ﷺ ने तमाम अंबिया की इमामत फ़रमाई। हज़ूर ﷺ के सफ़र-ए-मैराज के इस हिस्से का ज़िक्र जिस अंदाज़ में यहाँ हुआ है इसकी एक ख़ुसूसी अहमियत है। यह गोया ऐलान है कि नबी आख़िरुज़्ज़माँ ﷺ और आपकी उम्मत को तौहीद के इन दोनों मराकिज़ (बैतुल्लाह और बैतुल मक़दस) का मुतवल्ली बनाया जा रहा है। इस हवाले से आप ﷺ को पहले बैतुल मक़दस ले जाया गया और फिर वहाँ से आप ﷺ के आसमानी सफ़र का मरहला शुरू हुआ। सफ़र-ए-मैराज के इस दूसरे मरहले का ज़िक्र बहुत इख्तिसार के साथ सूरतुन्नजम में किया गया है।

لِنُرِيَهٗ مِنْ اٰيٰتِنَا ؕ اِنَّهٗ هُوَ السَّمِيْعُ الْبَصِيْرُ ①

"ताकि हम दिखाएँ उस (बंदे मुहम्मद ﷺ) को अपनी निशानियाँ। यक़ीनन वही है सब कुछ सुनने वाला, देखने वाला।"

बनी इस्राईल के अहम तरीन तारीख़ी मक़ाम का ज़िक्र करने के बाद अब आइंदा आयात में बात को आगे बढ़ाते हुए उनकी तारीख का हवाला दिया जा रहा है।

आयत 2

وَاٰتَيْنَا مُوْسَى الْكِتٰبَ وَجَعَلْنٰهُ هُدًى لِّبَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ

"और हमने मूसा को किताब (तौरात) दी और हमने उसे हिदायत बनाया बनी इस्राईल के लिए"

यहाँ तख्सीस कर दी गई कि तौरात तमाम बनी नौए इंसान के लिए हिदायत नहीं थी, बल्कि दरहक़ीकत वो सिर्फ़ बनी इस्राईल के लिए एक हिदायत नामा थी।

اَلَّا تَتَّخِذُوْا مِنْ دُوْنِيْ وَكِيْلًا ②

"कि तुम मत बनाओ मेरे सिवा किसी को कारसाज़।"

यानि तौरात तौहीद का दर्स देती थी। इसकी तालीमात का लुब्बे-लुबाब यह था कि अल्लाह के सिवा किसी भी दूसरी हस्ती या ज़ात को अपना कारसाज़ मत समझो, उसे छोड़ कर किसी दूसरे पर भरोसा या तवक्कुल ना करो।

आयत 3

ذُرِّيَّةَ مَنْ حَمَلْنَا مَعَ نُوْحٍ ؕ اِنَّهٗ كَانَ عَبْدًا شَكُوْرًا ③

"ऐ उन लोगों की औलाद जिन्हें हमने सवार कराया था नूह अलै. के साथ। यक़ीनन वह हमारा बहुत ही शुक्रगुज़ार बंदा था।"

हज़रत नूह अलै. के तीन बेटे साम, हाम और याफ़िस थे जिनसे बाद में नस्ले इंसानी चली। उनमें से हज़रत साम की नस्ल में हज़रत इब्राहीम अलै. पैदा हुए, जिनकी औलाद को यहाँ बनी इस्राईल के तौर पर मुख़ातिब किया जा रहा है। उन्हें याद दिलाया जा रहा है कि हज़रत नूह अलै. के साथ जिन लोगों को हमने बचाया था उन्हीं में से एक की औलाद तुम हो और नूह हमारा बहुत ही शुक्रगुज़ार बंदा था।

आयत 4

"और हमने मुतनब्बा (ख़बरदार) कर दिया था बनी इस्राईल को किताब में कि तुम ज़मीन में दो मरतबा फ़साद मचाओगे और बहुत बड़ी सरकशी करोगे।"

وَقَضَيْنَآ إِلَىٰ بَنِىٓ إِسْرَٰٓءِيلَ فِى ٱلْكِتَٰبِ لَتُفْسِدُنَّ فِى ٱلْأَرْضِ مَرَّتَيْنِ وَلَتَعْلُنَّ عُلُوًّا كَبِيرًا ۝٤

यानि तुम पर दो अदवार (वक़्त) ऐसे आयेंगे कि तुम ज़मीन में सरकशी करोगे, फ़साद बरपा करोगे, दीन से दूर हो जाओगे, लह्व व लअब में मुब्तला हो जाओगे, और फिर इसके नतीजे में अल्लाह की तरफ़ से तुम पर अज़ाब के कोड़े बरसेंगे।

यहाँ पर बैयनल सतूर यह इशारा भी है कि इससे पहले बनी इस्राईल पर एक बेहतर दौर भी आया था जिसमें अल्लाह तआला ने उन्हें अपनी रहमतों और नेअमतों से नवाज़ा था। सूरतुल बक़रह में उनके इस अच्छे दौर की कुछ तफ्सीलात हम पढ़ आये हैं। याद दिहानी के तौर पर अहम वाक़ियात इख़्तसार के साथ यहाँ फिर ताज़ा कर लें। हज़रत मूसा अलै. 1400 क़ब्ल मसीह में बनी इस्राईल को मिस्र से लेकर निकले थे। सहरा-ए-सीना में जबल (पहाड़) तूर के पास पड़ाव के ज़माने में आपको तौरात अता की गई। वहाँ से फिर शिमाल मशरिक़ की तरफ़ कूच करने और फ़लस्तीन पर हमलावर होने का हुक्म दिया गया। जिहाद के इस हुक्म से इंकार की पादाश में बनी इस्राईल को सहरा नूरदी की सज़ा मिली। इस दौरान में हज़रत मूसा और हज़रत हारून अलै. दोनों का यके बाद दीगरे (एक के बाद एक) इन्तेक़ाल हो गया। सहरा नूरदी के दौरान परवान चढ़ने वाली नस्ल बहादुर और जफ़ाकश थी। उन्होंने हज़रत मूसा अलै. के खलीफ़ा हज़रत यूशा बिन नून की सरकर्दगी में जिहाद किया जिसके नतीजे में फ़लस्तीन फ़तह हो गया। फ़लस्तीन का जो शहर सबसे पहले फ़तह हुआ वो अरीहा (Jericho) था। फ़लस्तीन की फ़तह के बाद एक बुनिादी गलती यह हुई कि एक मज़बूत मरकज़ी हुकूमत बनाने के बजाय यह इलाक़ा बनी इस्राईल के बारह क़बीलों ने आपस में बाँट लिया और हर क़बीले ने अपनी हुकूमत क़ायम कर ली। यह छोटी-छोटी हुकूमतें ना सिर्फ़ बैरूनी दुश्मनों के मुक़ाबले में बहुत कमज़ोर थीं बल्कि बहुत जल्द उन्होंने आपस में भी लड़ना-झगड़ना शुरू कर दिया, जिसके नतीजे में उनके ज़ेरे तसल्लुत (supermacy) इलाक़े बहुत जल्द इंतशार और तवायफ़ल मलूकी का शिकार हो गये। इन हालात को देखते हुए शाम और उरदन के हमसाया इलाक़ों में बसने वाली मुशरिक अक़वाम ने उन पर तसल्लुत हासिल करके उनकी बेशतर आबादी को उस इलाक़े से निकाल बाहर किया।

इस हालत को पहुँचने पर उन्होंने अपने नबी हज़रत सुमोईल अलै. से मुतालबा किया कि उनके लिए एक बादशाह या सिपहसालार मुक़र्रर कर दें ताकि उसकी क़यादत में तमाम क़बीले इकठ्ठे होकर जिहाद करें। इस मुतालबे के जवाब में अल्लाह तआला की तरफ़ से हज़रत तालूत को उनका बादशाह मुक़र्रर किया गया। हज़रत तालूत ने दुश्मन अफ़वाज के खिलाफ़ लश्करकशी की, जिनका सिपहसालार जालूत था। इस जंग में हज़रत दाऊद अलै. भी शामिल थे। आप (हज़रत दाऊद अलै.) ने जालूत को क़त्ल कर दिया, जिसके नतीजे में दुश्मन लश्कर पर बनी इस्राईल को फ़तह नसीब हुई और वो इलाक़े में एक मज़बूत हुकूमत क़ायम करने में कामयाब हो गये। हज़रत तालूत के बाद हज़रत दाऊद अलै. उनके जानशीन हुए और हज़रत दाऊद के बाद आपके बेटे हज़रत सुलेमान अलै. बादशाह बने।

हज़रत यूशा बिन नून की क़यादत में फ़लस्तीन के फ़तह होने से लेकर तालूत और जालूत की जंग तक तीन सौ साल का वक़्फ़ा है। हज़रत सुलेमान का अहदे हुकूमत इस तीन सौ साला दौर का का नुक़्ता-ए-उरूज था। हज़रत तालूत, हज़रत दाऊद और हज़रत सुलेमान अलै. का दौर-ए-इक़तदार

तक़रीबन एक सौ साल के अर्से पर मुहीत था। सोलह बरस तक हज़रत तालूत ने हुकूमत की, इसके बाद 40 बरस तक हज़रत दाऊद और फिर 40 बरस तक ही हज़रत सुलेमान बरसर इक़्तदार रहे। यह दौर गोया बनी इस्राईल की खिलाफ़ते राशिदा का दौर था जो हमारे दौरे खिलाफ़ते राशिदा से मुमासलत (similarity) रखता है। अग़रचे उनकी पहली तीन खिलाफ़तें एक सौ वर्ष के अर्से पर मुहीत थीं और हमारी उम्मत की पहली तीन खिलाफ़तों का अरसा चौबीस बरस था, लेकिन जिस तरह उनके पहले ख़लीफ़ा का दौरे इक़्तदार मुख्तसर और बाद के दोनों ख़ुल्फ़ाअ का दौर निस्बतन तवील था इसी तरह हमारे यहाँ भी हज़रत अबुबक्र रज़ि. का दौरे खिलाफ़त मुख़्तसर, जबकि हज़रत उमर और हज़रत उस्मान रज़ि. का दौर निस्बतन तवील था। इसके बाद हज़रत अली रज़ि. की खिलाफ़त को अमीर माविया रज़ि. ने क़ुबूल नहीं किया था, चुनाँचे शाम और मिस्र के इलाक़े अलैहदा रहे थे, बिल्कुल इसी तरह बनी इस्राईल की मम्लकत भी हज़रत सुलेमान अलै. की वफ़ात के बाद आपके दो बेटों के दरमियान तक़सीम हो गई। शिमाली मम्लकत का नाम इस्राईल था जिसका दारुल ख़िलाफ़ा सामरिया था, जबकि जुनूबी मम्लकत का नाम यहूदिया था और इसका दारुल खिलाफ़ा येरुशलम था।

इस अज़ीम सल्तनत की तक़सीम के बाद भी माद्दी ऐतबार से एक अर्से तक बनी इस्राईल का उरूज बरक़रार रहा, लेकिन रफ्ता-रफ्ता अवाम में मुशरिकाना अक़ाइद, अवहाम परस्ती और हवस-ए-दुनिया जैसी नज़रियाती व अखलाक़ी बीमारियाँ पैदा हो गईं, और अहकाम-ए-शरीअत का इस्तहज़ाअ (मज़ाक उड़ाना) उनका इज्तमाई वतीरा बन गया। चुनाँचे अख्लाक़ व किरदार का यह ज़वाल मन्तक़ी तौर पर उनके माद्दी ज़वाल पर मुन्तज हुआ। बनी इस्राईल का यह अहदे ज़वाल भी तक़रीबन तीन सौ साल ही के अर्से में अपनी इन्तहा को पहुँचा। सबसे पहले आसूरियों के हाथों उनकी शिमाली सल्तनत "इस्राईल" (सात-आठ सौ क़ब्ल मसीह के लगभग) तबाह हुई। उसके बाद 587 क़ब्ल मसीह में इराक़ के नमरूद बख़्तेनसर (Nebukadnezar) ने उनकी जुनूबी सल्तनत "यहूदिया" पर हमला किया और पूरी सल्तनत को तहस-नहस करके रख दिया। येरुशलम को इस तरह तबाह व बर्बाद किया गया कि किसी इमारत की दो ईंटें भी सलामत नहीं रहने दी गयीं। हैकल-ए- सुलेमानी को मस्मार करके उसकी बुनियादें तक खोद डाली गयीं। उस दौरान बख़्तेनसर ने छ: लाख यहूदियों को क़त्ल किया जबकि छ: लाख मर्दों, औरतों और बच्चों को जानवरों की तरह हाँकता हुआ बाबुल (इराक़) ले गया, जहाँ ये लोग सवा सौ साल तक असीरी (captivity) की हालत में रहे। ज़िल्लत व रुसवाई के ऐतबार से यह उनकी तारीख़ का बद्तरीन दौर था।

बनी इस्राईल के दूसरे दौरे उरूज का आगाज़ हज़रत उज़ैर अलै. की इस्लाही कोशिशों से हुआ। आपको बनी इस्राईल की निशाते सानिया (Renaissance) के नक़ीब की हैसियत हासिल है। 539 क़ब्ले मसीह में ईरान के बादशाह के-खोरस (Cyrus) या ज़ुलकर नैन ने इराक़ (बाबुल) फ़तह किया और उसके दूसरे ही साल उसने बनी इस्राईल को अपने वतन वापस जाने और वहाँ दोबारा आबाद होने की आम इजाज़त दे दी। चुनाँचे यहूदियों के क़ाफ़िले फ़लस्तीन जाने शुरू हो गये और यह सिलसिला मुद्दतों जारी रहा। 458 क़ब्ले मसीह में हज़रत उज़ैर अलै. भी एक जिला वतन गिरोह के साथ येरुशलम पहुँचे और उस शहर को आबाद करना शुरू किया और हैकल-ए- सुलेमानी की अज़सर नौ तामीर की। इससे क़ब्ल हज़रत उज़ैर अलै. को अल्लाह तआला ने सौ बरस तक सुलाए भी रखा। अल्लाह तआला ने उन पर एक सौ साल के लिए मौत तारी कर दी थी और फिर उन्हें ज़िन्दा किया और उन्हें ब-चश्मे-सर उनके मुर्दा गधे के ज़िन्दा होने का मुशाहिदा कराया, जिसके बारे में हम सूरतुल बक़रह (आयत 259) में पढ़ आए हैं। बहरहाल हज़रत उज़ैर अलै. ने तौबा की मुनादी के ज़रिये एक ज़बरदस्त तजदीदी और इस्लाही तहरीक चलाई जिसके नतीजे में उनके नज़रियात और आमाल व अख्लाक़ की इस्लाह होना शुरू हुई। हज़रत उज़ैर अलै. ने तौरात को भी याददाश्तों की मदद से अज़सरे नौ मुरत्तब किया जो बख़्तेनसर के हमले के दौरान गुम हो गई थी।

ईरानी सल्तनत के ज़वाल, सिकंदर मक़दूनी की फ़तूहात और फिर यूनानियों के उरूज से यहूदियों को कुछ मुद्दत के लिए शदीद धचका लगा। यूनानी सिपहसालार एंटोकस सालिस ने 198 क़.म. में फ़लस्तीन पर

क़ब्जा कर लिया। यूनानी फ़ातेहीन ने पूरी जाबराना ताक़त से काम लेकर यहूदी मज़हब व तहज़ीब की बीखकुनी (जड़ ख़त्म) करना चाही, लेकिन बनी इस्राईल इस जबर से मग़लूब ना हुए और उनके अंदर एक ज़बरदस्त तहरीक उठी जो तारीख़ में "मक्काबी बगावत" के नाम से मशहूर है। यह हज़रत उज़ैर अलै. की फूँकी हुई रूहे दीनदारी का असर था कि उन्होंने बिल्आखिर यूनानियों को निकाल कर अपनी एक अज़ीम आज़ाद रियासत क़ायम कर ली जो "मक्काबी सल्तनत" कहलाती है। बनी इस्राईल के दूसरे दौरे उरूज में क़ायम होने वाली यह सल्तनत 170 क़.म. से लेकर 67 क़.म तक पूरी शान व शौकत के साथ क़ायम रही। मक्काबी सल्तनत अपने वक़्त की मालूम दुनिया के तमाम इलाक़ों पर मुहीत थी। चुनाँचे रक़बे के ऐतबार से यह हज़रत सुलेमान अलै. की सल्तनत से भी वसीअ थी। उस ज़माना-ए-उरूज में फिर से उनकी नज़रियाती व अखलाक़ी हालत बिगड़ने लगी। मुशरिकाना आक़ाइद समेत बहुत सी अखलाक़ी बुराईयाँ फिर से उन में पैदा हो गईं, जिनके नतीजे में एक दफ़ा फिर यह क़ौम अज़ाबे खुदावंदी की ज़ाद में आ गई।

मक्काबी तहरीक जिस अखलाक़ी व दीनी रूह के साथ उठी थी वो बतदरीज फ़ना होती चली गई और उसकी जगह ख़ालिस दुनिया परस्ती और बेरूह ज़ाहिरदारी ने ले ली। आखिरकार उनके दरमियान फूट पड़ गई और उन्होंने खुद रूमी फ़ातह पोम्पई को फ़लस्तीन आने की दावत दी। चुनाँचे पोम्पई ने 63 क़.म. में बैतुल मक़दस पर क़ब्जा करके यहूदियों की आज़ादी का ख़ात्मा कर दिया। रोमियों ने फ़लस्तीन में अपने ज़ेरे साया एक देसी रियासत क़ायम कर दी जो बिल्आखिर 40 क़.म. में हीरूद नामी एक होशियार यहूदी के क़ब्जे में आई। यह शख़्स हीरूद आज़म के नाम से मशहूर है और इसकी फ़रमारवाई पूरे फ़लस्तीन और शरक़े उरदन पर 40 से 4 क़.म. तक रही। इस शख़्स ने रोमी सल्तनत की वफ़ादारी का ज़्यादा से ज़्यादा मुज़ाहि करके क़ैसर की ख़ुशनुदी हासिल कर ली थी। इस ज़माने में यहूदियों की दीनी व अखलाक़ी हालत गिरते-गिरते ज़वाल की आखरी हद को पहुँच गई थी। हीरूद आज़म के बाद उसकी रियासत उसके तीन बेटों के दरमियान तक़सीम हो गई। लेकिन 6 ई. में क़ैसर आगस्टस ने हीरूद के बेटे अरख़लाउस को माज़ूल करके उसकी पूरी रियासत अपने गर्वनर के मातहत कर दी और 41 ई. तक यही इंतेज़ाम क़ायम रहा। यही ज़माना था जब हज़रत मसीह अलै. बनी इस्राईल की इस्लाह के लिए उठे तो यहूदियों के तमाम मज़हबी पेशवाओं ने मिल कर उनकी मुख़ालफ़त की और उन्हें वाजिबुल क़त्ल क़रार देकर रोमी गवर्नर पोन्टस पिलातिस से उनको सज़ा-ए-मौत दिलवाने की कोशिश की और अपने ख़्याल के मुताबिक़ तो उनको सूली पर चढ़वा ही दिया।

रोमियों ने 41 ई. में हीरूद आज़म के पोते "हीरूद अगरपा" को इन तमाम इलाक़ों का हुक्मरान बना दिया जिन पर हीरूद आज़म अपने ज़माने में हुक्मरान था। इस शख़्स ने बरसर इक़तदार आकर मसीह अलै. के पैरोकारों पर मज़ालिम की इन्तहा कर दी। कुछ ही अर्से बाद यहूदियों और रोमियों के दरमियान सख़्त कशमकश शुरु हो गई और 64 ई. से 66 ई. के दौरान यहूदियों ने रोमियों के खिलाफ़ खुली बगावत कर दी, जो उनके उरूज सानी के खात्मे पर मुन्तज हुई। यहूदियों की बगावत का क़लअ-कमअ (खात्मा) करने के लिए बिल्आख़िर रूमी सल्तनत ने एक सख्त फ़ौजी कार्रवाई की और 70 ई. में टायटस (Titus) ने बज़ोर-ए-शम्शीर येरुशलम को फ़तह कर लिया। हैकले सुलेमानी एक दफ़ा फिर मस्मार कर दिया गया। जर्नल टायटस के हुक्म पर शहर में क़त्लेआम हुआ। एक दिन में एक लाख 33 हज़ार यहूदी क़त्ल हुए, जबकि 67 हज़ार को गुलाम बना लिया गया। इस तरह रोमियों ने पूरे शहर में कोई मुतनफ्फ़िस बाक़ी ना छोड़ा। इसके साथ ही अरज़े फ़लस्तीन से बनी इस्राईल का अमल-दख़ल मुकम्मल तौर पर ख़त्म हो गया। बीसवीं सदी के शुरू तक पूरे दो हज़ार बरस यह लोग जिला वतनी और इंतशार (Diaspora) की हालत में ही रहे। जर्नल टायटस के हाथों 70 ई. में हैकल सुलेमानी मस्मार हुआ तो आज तक तामीर ना हो सका। हुज़ूर ﷺ की पैदाईश (571 ई.) के वक़्त इसे मस्मार हुए पाँच सौ बरस गुज़र चुके थे।

यह खुलासा है उस क़ौम की दास्ताने इबरत का जो अपने वक़्त की उम्मते मुस्लिमा थी। जिसके अंदर चौदह सौ बरस तक मुसलसल नबुवत रही। जिसको तीन इल्हामी किताबों से नवाज़ा गया और जिसके बारे में

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: {يٰبَنِيۡۤ اِسۡرَآءِيۡلَ اذۡكُرُوۡا نِعۡمَتِىَ الَّتِىۡۤ اَنۡعَمۡتُ عَلَيۡكُمۡ وَاَنِّىۡ فَضَّلۡتُكُمۡ عَلَى الۡعٰلَمِيۡنَ} (बक़रह:47) "ऐ बनी इस्राईल याद करो मेरी वह नेअमत जो मैंने तुम लोगों को अता की और यह की मैंने तुम्हें फ़ज़ीलत दी तमाम जहान वालों पर।"

आख़िरकार बनी इस्राईल को उम्मते मुस्लिमा के मन्सब से माज़ूल करके मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की उम्मत को इस मसनदे फ़ज़ीलत पर मुतमक्कन किया गया। हुज़ूर ﷺ ने अपनी उम्मत के बारे में फ़रमाया कि तुम लोगों पर भी ऐन वही हालात वारिद होंगे जो बनी इस्राईल पर हुए थे। चुनाँचे ऐसा ही हुआ। मुसलमानों को पहला उरूज अरबों के ज़ेरे क़यादत नसीब हुआ। इसके बाद जब ज़वाल आया तो सलेबियों की यलगार की सूरत में उन पर अज़ाब के कोड़े बरसे। फिर तातारियों ने हलाकू ख़ान और चंगेज़ खान की क़यादत में आलमे इस्लाम को ताख़्त व ताराज किया। इसके बाद क़ुदरत ने आलमे इस्लाम की क़यादत अरबों से छीन कर उन्हीं तातारियों के हाथों में दे दी, जिन्होंने लाखों मुसलमानों का खून बहाया था।

है अयाँ फ़ितना-ए-तातार के अफ़साने से
पासबाँ मिल गये काबे को सनम खाने से

चुनाँचे तुर्कों की क़यादत में इस उम्मत को एक दफ़ा फिर उरूज नसीब हुआ। तुर्काने तैमूरी, तुर्काने सफ़वी, तुर्काने सल्जूक़ी और तुर्काने उस्मानी ने दुनिया में अज़ीमुश्शान हुकूमतें क़ायम कीं। इसके बाद उम्मते मुस्लिमा पर दूसरा दौरे ज़वाल आया। बनी इस्राईल पर दूसरा दौरे अज़ाब यूनानियों और रोमियों के हाथों आया था जबकि उम्मते मुस्लिमा पर दूसरा अज़ाब अक़वामे यूरोप के तसल्लुत की सूरत में आया और देखते ही देखते अंग्रेज़, फ्रान्सीसी, इतालवी, हस्पानवी और वलंदीज़ी (Dutch) पूरे आलमे इस्लाम पर क़ाबिज़ हो गये। बीसवीं सदी के आग़ाज़ में अज़ीम उस्मानी सल्तनत का खात्मा हो गया।

यह उन हालात और वाक़ियात का खुलासा है जिनको अल्लाह तआला ने अपनी तरफ़ मन्सूब करते हुए आयत ज़ेरे नज़र में फ़रमाया कि हमने तो पहले ही बनी इस्राईल के बारे में कह दिया था कि तुम लोग अपनी तारीख़ में दो दफ़ा फ़साद मचाओगे और सरकशी दिखाओगे।

आयत 5

فَاِذَا جَآءَ وَعۡدُ اُوۡلٰٮهُمَا بَعَثۡنَا عَلَيۡكُمۡ عِبَادًا لَّنَاۤ اُولِىۡ بَاۡسٍ شَدِيۡدٍ فَجَاسُوۡا خِلٰلَ الدِّيَارِ‌ؕ وَكَانَ وَعۡدًا مَّفۡعُوۡلًا ۝۵

"फिर जब उन दोनों में से पहले वादे का वक़्त आ गया तो हमने तुम पर मुसल्लत कर दिये अपने सख़्त जंगजू बंदे तो वो तुम्हारी आबादियों में घुस गये, और (यूँ हमारा) जो वादा था वो पूरा होकर रहा।"

यानि अल्लाह तआला की तरफ़ से जो तुम पर वाज़ेह किया गया था कि जब तुम लोग दीन से बरगश्ता हो (भटक) जाओगे, जब तुम अल्लाह की किताब और उसके अहकाम को हँसी-मज़ाक बना लोगे तो तुम ज़रूर अल्लाह के अज़ाब का निशाना बनोगे। चुनाँचे उनके दीन से बरगश्ता हो जाने के बाद आशूरियों और इराक़ के बादशाह बख़्तनसर के हाथों उन पर अज़ाब का कोड़ा बरसा, जिसके नतीजे में दोनों इस्राईली सल्तनतें ख़त्म हो गईं, येरुशलम मुकम्मल तौर पर तबाह हो गया, हैकले सुलेमानी मस्मार कर दिया गया, छ: लाख यहूदी क़त्ल हो गये जबकि छ: लाख को गुलाम बना लिया गया।

आयत 6

ثُمَّ رَدَدۡنَا لَـكُمُ الۡكَرَّةَ عَلَيۡهِمۡ

"फिर हमने तुम्हारी बारी लौटाई उन पर"

यानि इसके बाद अल्लाह तआला ने एक मर्तबा फिर तुम्हें सहारा दिया और उन पर ग़ल्बे का मौक़ा अता कर दिया। इस सहारे का बाइस ईरानी बादशाह कैखोरस (Cyrus) या ज़ुलकरनैन बना। उसने इराक़ (बाबुल) पर तसल्लुत हासिल कर लेने के बाद तुम्हें आज़ाद करके वापस येरुशलम जाने

और उस शहर को एक दफ़ा फिर से आबाद करने की इजाज़त दे दी। फिर जब तुमने वापस आकर येरुशलम को आबाद किया तो हमने एक दफ़ा फिर तुम्हारी मदद की:

وَاَمْدَدْنٰكُمْ بِاَمْوَالٍ وَّبَنِيْنَ وَجَعَلْنٰكُمْ اَكْثَرَ نَفِيْرًا ⑥

"और हमने मदद की तुम्हारी माल व दौलत और बेटों के ज़रिये से और बना तुम्हें कसीर तादाद (वाली क़ौम)।"

हमने तुम्हें माल व औलाद में बरकत दी और तुम्हारी तादाद पहले से बढ़ा दी। तुम लोग खूब फले-फूले और जल्द ही एक मज़बूत क़ौम बन कर उभरे।

आयत 7

اِنْ اَحْسَنْتُمْ اَحْسَنْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ ۙ وَاِنْ اَسَاْتُمْ فَلَهَا ۭ

"अगर तुमने कोई भलाई की तो ख़ुद अपने ही लिए की, और अगर कोई बुराई कमाई तो वो भी अपने ही लिए कमाई।"

तुम्हारे नेक आमाल का फ़ायदा भी तुम्हें हुआ और तुम्हारी बुराईयों और नाफ़रमानियों का वबाल दुनिया में भी तुम पर आया और इसका वबाल आख़िरत में भी तुम पर पड़ेगा।

فَاِذَا جَاۗءَ وَعْدُ الْاٰخِرَةِ

"फिर जब दूसरे वादे का वक़्त आया"

जब दोबारा तुमने अल्लाह के दीन से सरकशी इख़्तियार की, तुम्हारे ऐतक़ादात, नज़रियात और अख्लाक़ फिर से मस्ख़ हो गये तो वादे के ऐन मुताबिक़ तुम पर अज़ाब के दूसरे मरहले का वक़्त आ पहुँचा।

لِيَسُوْۗءٗا وُجُوْهَكُمْ

"ताकि वो तुम्हारे चेहरे बिगाड़ दें"

इस सिलसिले में पहले यह अल्फ़ाज़ आये थे: {بَعَثْنَا عَلَيْكُمْ عِبَادًا لَّنَآ اُولِيْ بَاْسٍ شَدِيْدٍ} (आयत 5) कि हमने तुम पर अपने बंदे मुसल्लत कर दिए जो सख़्त जंगजू थे। इस फ़िक़रे का मफ़हूम यहाँ भी पाया जाता है, लेकिन यहाँ दोबारा इसे दोहराया नहीं गया। चुनाँचे इस फ़िक़रे को यहाँ महज़ूफ़ समझा जायेगा और आयत का मफ़हूम यूँ होगा कि हमने फिर तुम पर अपने सख़्त जंगजू बंदे मुसल्लत किए ताकि वो तुम्हारे हीले बिगाड़ दें।

وَلِيَدْخُلُوا الْمَسْجِدَ كَمَا دَخَلُوْهُ اَوَّلَ مَرَّةٍ

"और वो दाख़िल हो जायें मस्जिद में जैसे कि दाख़िल हुए थे पहली मर्तबा"

यहाँ इर्शाद है बैतुल मक़दस और हैकले सुलेमानी की बारे दीगर बेहुरमती की तरफ़। जैसे 587 क़ब्ले मसीह में बख़्तनसर ने बैतुल मक़दस और हैकले सुलेमानी को मस्मार किया था, वैसे ही रूमी जर्नल टायटस ने 70 ई. में एक दफ़ा फिर उनके तक़द्दुस को पामाल किया।

وَّلِيُتَبِّرُوْا مَا عَلَوْا تَتْبِيْرًا ⑦

"और तबाह व बर्बाद करके रख दें (हर उस शय को) जिसके ऊपर भी उन्हें कब्ज़ा हासिल हो जाये।"

इन आयात में बनी इस्राईल की दो हज़ार सालाह तारीख के नशेब-ओ-फ़राज़ की तफ़्सीलात को समो दिया गया है। इस अरसे में उन्होंने दो मर्तबा उरूज देखा और दो दफ़ा ही ज़वाल से दो-चार हुए। नबी आखिरुज्ज़मान ﷺ की बेअसत के ज़माने में इन आयात के नुज़ूल के वक़्त उनके दूसरे दौरे ज़वाल को शुरु हुए पाँच सौ बरस होने को आये थे। इस सयाक़ व सबाक़ में उन्हें मुतनब्बा (ख़बरदार) किया जा रहा है कि:

आयत 8

"हो सकता है कि अब तुम्हारा रब तुम पर रहम करे, और अगर तुमने वही रविश इख़्तियार की तो हम भी वही कुछ करेंगे।"

عَسٰى رَبُّكُمْ اَنْ يَّرْحَمَكُمْ ۚ وَاِنْ عُدْتُّمْ عُدْنَا ۘ

अगर तुमने पहले की तरह हमारी नाफ़रमानियों और अहकामे शरीअत से ऐराज़ की रविश इख़्तियार की तो हम भी उसी तरह फिर तुम्हें सज़ा देंगे।

"और हमने जहन्नम को काफ़िरों के लिये क़ैदख़ाना बना रखा है।"

وَجَعَلْنَا جَهَنَّمَ لِلْكٰفِرِيْنَ حَصِيْرًا ۝٨

नाफ़रमानियों की सज़ा दुनिया में तो मिलेगी ही, जबकि जहन्नम का अज़ाब इसके आलावा होगा। जिस तरह जानवरों को घेर कर बाड़े में बंद कर दिया जाता है इसी तरह आख़िरत में अल्लाह के नाफ़रमानों को इकठ्ठा करके जहन्नम के क़ैद खाने में धकेल दिया जायेगा। (!اَللّٰهُمَّ لَا تَجْعَلْنَا مَعَهُمْ)

आयत 9

"यक़ीनन यह क़ुरान रहनुमाई करता है उस राह की तरफ़ जो सबसे सीधी है"

اِنَّ هٰذَا الْقُرْاٰنَ يَهْدِيْ لِلَّتِيْ هِيَ اَقْوَمُ

याद रखो! अब राहे हिदायत वही होगी जिसकी निशानदेही यह किताब करेगी जिसे हम अपने आखरी रसूल ﷺ पर नाज़िल कर रहे हैं। अब अल्लाह के क़सरे रहमत में दाखिल होने का "शाहदरह" एक ही है और वो है यह क़ुरान। अब अगर तुम अल्लाह के दामने रहमत में पनाह लेना चाहते हो तो इस क़ुरान के रास्ते से होकर आओ। अगर ऐसा करोगे तो अल्लाह की रहमत के दरवाज़े एक बार फिर तुम्हारे लिए खुल जायेंगे और जो रफ़अतें और बरकतें इस आखरी नबी ﷺ की उम्मत के लिए लिखी गई हैं तुम भी उनमें हिस्सेदार बन जाओगे।

"और बशारत देता है उन अहले ईमान को जो नेक अमल भी करें कि उनके लिए बहुत बड़ा अज्र है।"

وَيُبَشِّرُ الْمُؤْمِنِيْنَ الَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ الصّٰلِحٰتِ اَنَّ لَهُمْ اَجْرًا كَبِيْرًا ۝٩ۙ

आयत 10

"और यह कि जो लोग ईमान नहीं रखते आख़िरत पर, उनके लिए हमने तैयार कर रखा है एक दर्दनाक अज़ाब।"

وَّاَنَّ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ اَعْتَدْنَا لَهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ۝١٠ۙ

यहाँ यह नुक़्ता काबिले ग़ौर है कि जहाँ कहीं भी आमाल की ख़राबी की बात होती है वहाँ ईमान बिल्आख़िरत का तज़किरा ज़रूर होता है।

इस रुकूअ के हवाले से यह बात बहुत अहम है कि यहाँ बनी इस्राईल के उरूज व ज़वाल के आईने में जो तस्वीर दिखाई गई है उसमें हमारे लिए एक दावते फ़िक्र है। अल्हम्दुलिलाह! आज हम (उम्मते मुहम्मद ﷺ) उम्मते मुस्लिमा हैं, लेकिन हमें मालूम होना चाहिए कि एक ज़माने में बनी इस्राईल भी उम्मते मुस्लिमा ही थे। वो ब-हैसियते नस्ल आज भी एक क़ौम के तौर पर मौजूद हैं मगर उन्हें उम्मते मुस्लिमा के मन्सब से माज़ूल कर दिया गया है। अब उन लोगों की हैसियत साबक़ा उम्मते मुस्लिमा की है और पिछले दो हज़ार बरस से यह लोग बहुत ज़्यादा सख़्तियों का शिकार रहे हैं। हमें इनकी क़ौमी तारीख़ के नशेब व फ़राज का जायज़ा लेकर यह मालूम करने की कोशिश करनी चाहिए कि वो कौन से अवामिल थे और उनके अक़ाइद व आमाल की वो कौनसी ख़राबियाँ थीं जिनके बाइस वो लोग अल्लाह के यहाँ मग़ज़ूब व मअतूब ठहरे।

यहाँ दूसरा नुक़्ता यह ज़हननशीन करने के लायक़ है कि साबक़ा और मौजूदा उम्मतों के दरमियान मुक़ाबले के लिए मैदान तेज़ी से तैयार हो रहा है और यूँ समझिये कि दो पतंगे ऊपर चढ़ रही हैं, जिनके दरमियान

पेच पड़ने वाला हैं। बनी इस्राईल अपने इंतहाई ज़वाल को पहुँचने के बाद ब-हैसियत एक क़ौम के पिछले एक सौ साल से माद्दी लिहाज़ से रू-बा तरक्क़ी हैं। उनकी पतंग 1917 ई. में बालफ़ोर (Balfor) डिक्लेरेशन की मंज़ूरी से ऊपर चढ़ना शुरु हुई और 1948 ई. में इस्राईल की रियासत मअरिज़े वुजूद में आ गई। 1966 ई. में उसकी मज़ीद तौसीअ अमल में आई और उसके तहफ्फ़ुज़ को यक़ीनी बनाने के लिए ग़ैर-मामूली अक़दामात किए गये। अरब दुनिया का वाहिद मुल्क इराक़ था जिससे इस्राईल को ख़तरा हो सकता था, उसे बाक़ायदा एक मंसूबे के तहत तबाह व बर्बाद कर दिया गया है। इसके बाद उस पूरे ख़ित्ते में अब कोई ऐसा मुल्क नहीं जो इस्राईल की ताक़त चैलेंज करने की सलाहियत रखता हो।

दूसरी तरफ़ देखा जाये तो मुस्लिम दुनिया भी अपने ज़वाल की आखरी हदों को छूने के बाद अब बेदारी की तरफ़ माईल है और इस उम्मत के अंदर नई ज़िन्दगी पैदा होने का वक़्त क़रीब नज़र आता है। पहली जंगे अज़ीम के बाद 1924 ई. में ख़िलाफ़ते उस्मानिया का ख़ात्मा गोया हमारे ज़वाल की इन्तहा थी। उसके बाद आलमे इस्लाम में आज़ादी की तहरीकें चलीं और मुतअद्दिद मुस्लिम मुमालिक यूरोपी अक़वाम के तसल्लुत से आज़ाद हो गये। मज़ीद बराँ उम्मते मुस्लिम में बहुत सी अहयाई तहरीकें उठीं, मसलन पाक व हिन्द में जमाते इस्लामी, मिस्र में इख्वानुल मुस्लिमून(18)*, ईरान में फ़िदाई तहरीक और इंडोनेशिया में मस्जूमी पार्टी वगैरह, और इस तरह इसकी नशाते सानिया के अमल का आग़ाज हो गया। चुनाँचे पिछली सदी से उम्मते मुस्लिमा की सफ़ों में ज़वाल और अहयाई अमल पहलु-ब-पहलु चल रहे हैं। जैसे सूरह रहमान में मुतवाज़ी चलने वाले दो दरियाओं की मिसाल दी गई है: { مَرَجَ الْبَحْرَيْنِ يَلْتَقِيٰنِ } { بَيْنَهُمَا بَرْزَخٌ لَّا يَبْغِيٰنِ } (आयात 19-20) “उसने दो दरिया रवां किए जो आपस में मिलते हैं। दोनों में एक आड़ है कि (उससे) तजावुज़ नहीं कर सकते।” अब सूरते हाल यह है कि साबक़ा और मौजूदा उम्मते मुस्लिमा की सूरत में दो पतंगें फ़िज़ा में तैर रही हैं और इनका आपस में किसी वक़्त भी पेंच पड़ सकता है।

यह तमाम तफ़्सिलात उन लोगों के इल्म में होनी चाहिए जो दीन की ख़िदमत में मसरूफ़ हैं। उन्हें ज़मान व मकान के ऐतबार से दुरुस्त अदराक होना चाहिए कि वो कहाँ खड़े हैं, उनके दायें-बायें क्या हालात हैं? माज़ी में क्या होता रहा है, अभी सामने क्या कुछ है और मुस्तक़बिल में क्या इम्कानात हैं?

आयात 11 से 22 तक

وَيَدْعُ الْاِنْسَانُ بِالشَّرِّ دُعَآءَهٗ بِالْخَيْرِ ؕ وَكَانَ الْاِنْسَانُ عَجُوْلًا ۝١١ وَجَعَلْنَا الَّيْلَ
وَالنَّهَارَ اٰيَتَيْنِ فَمَحَوْنَآ اٰيَةَ الَّيْلِ وَجَعَلْنَآ اٰيَةَ النَّهَارِ مُبْصِرَةً لِّتَبْتَغُوْا فَضْلًا مِّنْ
رَّبِّكُمْ وَلِتَعْلَمُوْا عَدَدَ السِّنِيْنَ وَالْحِسَابَ ؕ وَكُلَّ شَيْءٍ فَصَّلْنٰهُ تَفْصِيْلًا ۝١٢ وَكُلَّ
اِنْسَانٍ اَلْزَمْنٰهُ طٰٓئِرَهٗ فِيْ عُنُقِهٖ ؕ وَنُخْرِجُ لَهٗ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ كِتٰبًا يَّلْقٰىهُ مَنْشُوْرًا ۝١٣
اِقْرَاْ كِتٰبَكَ ؕ كَفٰى بِنَفْسِكَ الْيَوْمَ عَلَيْكَ حَسِيْبًا ۝١٤ مَنِ اهْتَدٰى فَاِنَّمَا يَهْتَدِيْ
لِنَفْسِهٖ ۚ وَمَنْ ضَلَّ فَاِنَّمَا يَضِلُّ عَلَيْهَا ؕ وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِّزْرَ اُخْرٰى ؕ وَمَا كُنَّا
مُعَذِّبِيْنَ حَتّٰى نَبْعَثَ رَسُوْلًا ۝١٥ وَاِذَآ اَرَدْنَآ اَنْ نُّهْلِكَ قَرْيَةً اَمَرْنَا مُتْرَفِيْهَا
فَفَسَقُوْا فِيْهَا فَحَقَّ عَلَيْهَا الْقَوْلُ فَدَمَّرْنٰهَا تَدْمِيْرًا ۝١٦ وَكَمْ اَهْلَكْنَا مِنَ الْقُرُوْنِ
مِنْۢ بَعْدِ نُوْحٍ ؕ وَكَفٰى بِرَبِّكَ بِذُنُوْبِ عِبَادِهٖ خَبِيْرًۢا بَصِيْرًا ۝١٧ مَنْ كَانَ يُرِيْدُ
الْعَاجِلَةَ عَجَّلْنَا لَهٗ فِيْهَا مَا نَشَآءُ لِمَنْ نُّرِيْدُ ثُمَّ جَعَلْنَا لَهٗ جَهَنَّمَ ۚ يَصْلٰىهَا مَذْمُوْمًا
مَّدْحُوْرًا ۝١٨ وَمَنْ اَرَادَ الْاٰخِرَةَ وَسَعٰى لَهَا سَعْيَهَا وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَاُولٰٓئِكَ كَانَ
سَعْيُهُمْ مَّشْكُوْرًا ۝١٩ كُلًّا نُّمِدُّ هٰٓؤُلَآءِ وَهٰٓؤُلَآءِ مِنْ عَطَآءِ رَبِّكَ ؕ وَمَا كَانَ عَطَآءُ
رَبِّكَ مَحْظُوْرًا ۝٢٠ اُنْظُرْ كَيْفَ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلٰى بَعْضٍ ؕ وَلَلْاٰخِرَةُ اَكْبَرُ دَرَجٰتٍ
وَّاَكْبَرُ تَفْضِيْلًا ۝٢١ لَا تَجْعَلْ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ فَتَقْعُدَ مَذْمُوْمًا مَّخْذُوْلًا ۝٢٢

आयत 11

وَيَدْعُ الْاِنْسَانُ بِالشَّرِّ دُعَآءَهٗ بِالْخَيْرِ ؕ

"और इंसान शर माँग बैठता है (अपने नज़दीक) भलाई माँगते हुए।"

यानि इंसान अल्लाह से दुआ कर रहा होता कि ऐ अल्लाह! मेरे लिए यूँ कर दे, यूँ कर दे। हालाँकि उसे कुछ मालूम नहीं होता कि जो कुछ वह अपने लिए माँग रहा है वह उसके लिये मुफ़ीद (फ़ायदेमन्द) है या मुज़र (ख़तरनाक)। इस तरह इंसान अपने लिए अकसर वो कुछ माँग लेता है जो उसके लिए उल्टा नुक़सान देह होता है। सूरह अल बक़रह (आयत 216) में फ़रमाया गया है: {وَعَسٰٓى اَنْ تَكْرَهُوْا شَيْـًٔا وَّهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ وَعَسٰٓى اَنْ تُحِبُّوْا شَيْـًٔا وَّهُوَ شَرٌّ لَّكُمْ ۗ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ وَاَنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ} "मुम्किन है कि तुम किसी चीज़ को नापसंद करो और वो तुम्हारे लिए बेहतर हो, और मुम्किन है कि तुम किसी चीज़ को पसंद करो और वो तुम्हारे लिए शर हो, अल्लाह जानता है और तुम नहीं जानते।" चुनाँचे बेहतर लाइहा अमल यह है कि अल्लाह पर तवक्कुल करते हुए इंसान अपने मामलात उसके हवाले कर दे कि ऐ अल्लाह! मेरे मामलात तेरे सुपुर्द हैं, क्योंकि मेरे नफ़ा व नुक़सान को तू मुझसे बेहतर जानता है:

सुपुर्दम बुतों माया-ए-ख़वीश रा
तू दानी हिसाबे कम वबीश रा!

दुआ-ए-इस्तख़ारा में भी हमें तफ़ीज़े अम्र का यही अंदाज़ सिखाया गया है:

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَسْتَخِيْرُکَ بِعِلْمِکَ وَاَسْتَقْدِرُکَ بِقُدْرَتِکَ وَاَسْئَلُکَ مِنْ فَضْلِکَ الْعَظِيْمِ، فَاِنَّکَ تَقْدِرُ وَلَا اَقْدِرُ وَتَعْلَمُ وَلَا اَعْلَمُ وَاَنْتَ عَلَّامُ الْغُيُوْبِ

"ऐ अल्लाह! मैं तेरे इल्म की बदौलत तुझसे ख़ैर चाहता हूँ और तेरी क़ुदरत की बरकत से ताक़त माँगता हूँ और तुझसे सवाल करता हूँ तेरे फ़जले अज़ीम का, बेशक तू हर चीज़ पर क़ुदरत रखता है और मेरे इख़्तियार में कुछ भी नहीं, तू सब कुछ जानता है और मैं कुछ भी नहीं जानता, और तू हर क़िस्म के ग़ैब को जानने वाला है।"(19)

बहरहाल इंसान का अमूमी रवैया यही होता है कि वह अल्लाह पर तवक्कुल करने के बजाय अपनी अक़्ल और सोच पर इंहसार (भरोसा) करता है और इस तरह अपने लिए ख़ैर की जगह शर की दुआएँ करता रहता है।

وَكَانَ الْاِنْسَانُ عَجُوْلًا ۝

"और इंसान बहुत जल्दबाज़ है।"

अपनी इस जल्दबाज़ी और कोताह नज़री की वजह से वो शर को ख़ैर और ख़ैर को शर समझ बैठता है।

आयत 12

وَجَعَلْنَا الَّيْلَ وَالنَّهَارَ اٰيَتَيْنِ فَمَحَوْنَآ اٰيَةَ الَّيْلِ وَجَعَلْنَآ اٰيَةَ النَّهَارِ مُبْصِرَةً لِّتَبْتَغُوْا فَضْلًا مِّنْ رَّبِّكُمْ

"और हमने बनाया रात और दिन को दो निशानियाँ, तो तारीक (अंधेर) कर दिया हमने रात की निशानी को और रौशन बना दिया हमने दिन की निशानी को, ताकि तुम तलाश करो अपने रब का फ़ज़ल"

दिन को रौशन बनाया ताकि उसकी रौशनी में तुम लोग आसानी से कसबे मआश के लिए दौड़-धूप कर सको।

وَلِتَعْلَمُوْا عَدَدَ السِّنِيْنَ وَالْحِسَابَ ؕ وَكُلَّ شَيْءٍ فَصَّلْنٰهُ تَفْصِيْلًا ۝

"और ताकि तुम जान लो सालों की गिनती और (निज़ामुल अवक़ात का) हिसाब, और हर चीज़ को हमने खोल-खोल कर बयान कर दिया है।"

यह दिन और रात का उलट-फेर ही है जो निज़ामुल अवक़ात का बुनियादी ढ़ाँचा फ़राहम करता है और दिनों से हफ्ते, महीने और फिर साल बनते हैं।

आयत 13

وَكُلَّ اِنۡسَانٍ اَلۡزَمۡنٰهُ طٰٓئِرَهٗ فِىۡ عُنُقِهٖ‌ؕ

"और हर इंसान की क़िस्मत चिपका दी है हमने उसकी गर्दन में।"

طٰٓئِر का लफ्ज़ अरबी में आमतौर पर शगुन, नहूसत और बदक़िस्मती के लिए बोला जाता है, लेकिन यहाँ पर खुशबख़्ती और बदबख़्ती दोनो ही मुराद हैं। यानि किसी इंसान का जो भी मक़सूम (अपॉइंटमेंट) व मुक़द्दर है, ज़िन्दगी में अच्छा-बुरा जो कुछ भी उसे मिलना है, जैसे भी अच्छे-बुरे हालात उसे पेश आने हैं, इस सब कुछ के बारे में उसका जो खाता "उम्मुल किताब" में मौजूद है उसका हासिल उसकी गर्दन में चिपका दिया गया है। गर्दन में चिपकाने के अल्फ़ाज़ का इस्तेमाल मुहावरतन भी हो सकता है और यह भी मुमकिन है कि इसकी कुछ माद्दी हक़ीक़त भी हो। यानि हो सकता है कि अल्लाह तआला ने इंसान की गर्दन में किसी gland की सूरत में वाक़ई कोई माइक्रो कम्पयुटर नसब कर रखा हो। वल्लाहु आलम!

وَنُخۡرِجُ لَهٗ يَوۡمَ الۡقِيٰمَةِ كِتٰبًا يَّلۡقٰٮهُ مَنۡشُوۡرًا ۝۱۳

"और हम निकाल लेंगे उसके लिए क़यामत के रोज़ (उसे) एक किताब (की शक्ल में), वो पायेगा उसे खुली हुई।"

इन अल्फ़ाज़ से तो ऐसा ही महसूस होता है कि इंसानी जिस्म के अंदर ही कोई ऐसा सिस्टम लगा दिया गया है जिसमें उसके तमाम आमाल व अफ़आल रिकॉर्ड हो रहे हैं और क़यामत के दिन एक चिप की शक्ल में उसे उसके सामने रख दिया जायेगा। इस चिप के अंदर उसकी ज़िन्दगी की सारी फिल्म मौजूद होगी, एक-एक हरकत जो उसने की होगी, एक-एक लफ़्ज़ जो उसने मुँह से निकाला होगा, एक-एक ख़्याल जो उसके ज़हन मे पैदा हुआ होगा, एक-एक नीयत जो उसके दिल में परवान चढ़ी होगी, सब डेटा पूरी तफ़्सील के साथ उसमें महफ़ूज़ होगा। रोज़े क़यामत इस चिप को खोल कर खुली किताब की तरह उसके सामने रख दिया जायेगा और कहा जायेगा:

आयत 14

اِقۡرَاۡ كِتٰبَكَ‌ؕ كَفٰى بِنَفۡسِكَ الۡيَوۡمَ عَلَيۡكَ حَسِيۡبًا ۝۱۴

"पढ़ लो अपना आमाल नामा! आज तुम ख़ुद ही अपना हिसाब कर लेने के लिए काफ़ी हो।"

तुम्हारी ज़िन्दगी की किताब का एक-एक वरक़ इस क़द्र तफ़सील से तुम्हारे सामने मौजूद है कि तुम ख़ुद ही अपना हिसाब कर सकते हो। तुम्हारा सारा debit/credit तुम्हारे सामने है।

आयत 15

مَنِ اهۡتَدٰى فَاِنَّمَا يَهۡتَدِىۡ لِنَفۡسِهٖ‌ۚ وَمَنۡ ضَلَّ فَاِنَّمَا يَضِلُّ عَلَيۡهَا‌ؕ

"जिस किसी ने हिदायत की राह इख़्तियार की तो उसने अपने ही (भले के) लिये हिदायत की राह इख़्तियार की, और जो कोई गुमराह हुआ तो उसकी गुमराही का वबाल उसी पर है।"

وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِّزۡرَ اُخۡرٰى‌ؕ

"और कोई जान किसी दूसरी जान का बोझ उठाने वाली नहीं बनेगी।"

रोज़े क़यामत हर किसी को अपनी बद् आमालियों का बोझ ज़ाती तौर पर ख़ुद ही उठाना होगा। इस सिलसिले में कोई किसी की कुछ मदद नहीं कर सकेगा। सब अपने-अपने आमाल का अम्बार अपने-अपने कंधों पर उठाए होंगे।

وَمَا كُنَّا مُعَذِّبِيْنَ حَتّٰى نَبْعَثَ رَسُوْلًا ﴿١٥﴾

"और हम अज़ाब देने वाले नहीं हैं जब तक कि किसी रसूल को ना भेज दें।"

यह अल्लाह तआला की सुन्नत रही है कि किसी भी क़ौम पर अज़ाबे इस्तेसाल उस वक़्त तक नहीं भेजा गया जब तक कि उस क़ौम की हिदायत के लिए और हक़ व बातिल का फ़र्क़ वाज़ेह कर देने के लिए कोई रसूल मबऊस नहीं कर दिया गया। अलबत्ता छोटे-छोटे अज़ाब इस क़ानून से मशरूत (अधिनियम में) नहीं। क़ुरान में क़ौमे नूह, क़ौमे हूद, क़ौमे सालेह अलै. वगैरह की मिसालें बार-बार बयान की गई हैं जिनसे इस असूल की वाज़ेह निशानदेही होती है कि किसी क़ौम को अज़ाब के ज़रिये उस वक़्त तक मुकम्मल तौर पर तबाह व बर्बाद नहीं किया जाता जब तक अल्लाह का मबऊस करदा रसूल उस क़ौम के लिए हक़ का हक़ होना बिल्कुल वाज़ेह ना कर दे और इस सिलसिले में उस क़ौम पर इत्मामे हुज्जत ना हो जाये। यही मज़मून सूरह निसा में इस तरह बयान हुआ है: {رُسُلًا مُّبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ لِئَلَّا يَكُوْنَ لِلنَّاسِ عَلَي اللّٰهِ حُجَّةٌ بَعْدَ الرُّسُلِ} (आयत 165) "(उसने भेजे) रसूल ख़ुशखबरी देने वाले और खबरदार करने वाले ताकि ना रहे लोगों के लिए अल्लाह के मुक़ाबले में कोई हुज्जत रसूल के बाद।"

आयत 16

وَاِذَآ اَرَدْنَآ اَنْ نُّهْلِكَ قَرْيَةً اَمَرْنَا مُتْرَفِيْهَا فَفَسَقُوْا فِيْهَا

"और जब हम इरादा करते कि तबाह कर दें किसी बस्ती को तो हम उसके खुशहाल लोगों को हुक्म देते और वो उसमें खूब ना-फ़रमानियाँ करते"

فَحَقَّ عَلَيْهَا الْقَوْلُ فَدَمَّرْنٰهَا تَدْمِيْرًا ﴿١٦﴾

"पस साबित हो जाती उस पर (अज़ाब की) बात, फिर हम उसको बिल्कुल नेस्तो-नाबूद कर देते।"

यहाँ किसी बस्ती पर अज़ाबे इस्तेसाल के नाज़िल होने का उसूल बताया जा रहा है कि किसी भी मआशरे में इसका सबब वहाँ के दौलतमंद और खुशहाल लोग बनते हैं। यह लोग अलल ऐलान अल्लाह तआला के अहकाम की नाफ़रमानियाँ करते हैं। इस सिलसिले में उनकी दीदा दिलेरी के सबब उनकी रस्सी मज़ीद दराज़ की जाती है, यहाँ तक कि वो अपनी अय्याशियों और मनमानियों में तमाम हदें फलाँग कर पूरी तरह अज़ाब के मुस्तिहक़ हो जाते हैं, अवाम उन्हें उनके करतूतों से बाज़ रखने के लिए कोई किरदार अदा नहीं करते, बल्कि एक वक़्त आता है जब वो भी उनके साथ जराइम में शरीक हो जाते हैं और यूँ ऐसा मआशरा अल्लाह के अज़ाब की लपेट में आ जाता है। ऐसे में सिर्फ़ वही लोग अज़ाब से बच पाते हैं जो नही अनिल मुन्कर का फ़रीज़ा अदा करते रहे हों।

आयत 17

وَكَمْ اَهْلَكْنَا مِنَ الْقُرُوْنِ مِنْۢ بَعْدِ نُوْحٍ ۭ وَكَفٰى بِرَبِّكَ بِذُنُوْبِ عِبَادِهٖ خَبِيْرًۢا بَصِيْرًا ﴿١٧﴾

"और कितनी ही क़ौमों को हमने हलाक किया नूह के बाद। और काफ़ी है आपका रब अपने बंदों के गुनाहों से बाख़बर रहने और उनको देखने के लिए।"

आयत 18

مَنْ كَانَ يُرِيْدُ الْعَاجِلَةَ عَجَّلْنَا لَهٗ فِيْهَا مَا نَشَآءُ لِمَنْ نُّرِيْدُ

"जो कोई आजला का तलबगार बनता है हम उसको जल्दी दे देते हैं उसमें से जो कुछ हम चाहते हैं, जिसके लिए चाहते हैं"

यहाँ पर "दुनिया" के बजाय "आजला" का लफ़्ज़ आया है। यह दोनो अल्फ़ाज़ मुअन्नस हैं। "अदना" क़रीब की चीज़ को कहा जाता है, इसकी मुअन्नस "दुनिया" है जबकि "आजिल" के मायने जल्दी वाली चीज़ के हैं और इसकी मुअन्नस "आजला" है। यह दुनिया नक़द का सौदा है, यहाँ पर राहत भी फ़ौरन आसूदगी देती है और इसकी तकलीफ़ भी फ़ौरी तौर पर ख़ुद को महसूस कराती है। इसी लिए इसे "आजला" कहा गया है। आजला के मुक़ाबले में आयत ज़ेरे नज़र में "आख़िरत" का लफ़्ज़ इस्तेमाल किया गया है जो कि क़ुरान हकीम में अक्सर "दुनिया" के मुक़ाबले में भी आता है। दुनिया आजला के मुक़ाबले में आख़िरत को आख़िरत इसलिए कहा जाता है कहा जाता है कि इसका सवाब व अज़ाब बाद में आने वाली चीज़ है।

आयत ज़ेरे नज़र में जो उसूल बयान हुआ है उसकी वज़ाहत यह है कि जो शख़्स दुनिया की ऐश व दुनिया की दौलत व शौहरत हासिल करने का ख़्वाहिशमंद हो और सिर्फ़ उसी के लिए मन्सूबाबंदी, मेहनत और दौड़-धूप करे, उसकी मेहनत और दौड़-धूप को अल्लाह किसी ना किसी दर्जे में कामयाब कर देता है, मगर ज़रूरी नहीं कि जिस क़दर कोई दुनिया समेटना चाहे उसी क़दर उसे मिल भी जाये। और यह भी ज़रूरी नहीं कि जो कोई भी इस "आजला" को पाने की दौड़ में शामिल हो, कामयाब ठहरे, बल्कि हर किसी को वही कुछ मिलेगा जो अल्लाह चाहेगा, और सिर्फ़ उसी को मिलेगा जिसके लिए वो चाहेगा। बहुत से लोग ऐसे भी होते हैं जो असूले दुनिया के लिए सारी उम्र अपने आपको हलकान कर देते हैं, मगर दुनिया फिर भी हाथ नहीं आती। चुनाँचे यह अल्लाह का फैसला है कि जिसको वो चाहता है और जिस क़दर चाहता है दुनिया में उसकी मेहनत का सिला दे देता है।

ثُمَّ جَعَلْنَا لَهٗ جَهَنَّمَ ۚ يَصْلٰىهَا مَذْمُوْمًا مَّدْحُوْرًا ﴿١٨﴾

"फिर हम मुक़र्रर कर देते हैं उसके लिए जहन्नम। वो दाख़िल होगा उसमें मलामत ज़दा, धुत्कारा हुआ।"

उस शख़्स की ख़्वाहिश और मेहनत सब दुनिया के लिए की थी, चुनाँचे दुनिया किसी ना किसी क़दर उसे दे दी गई। आख़िरत के लिए उसने ख़्वाहिश की थी और ना मेहनत, लिहाज़ा आख़िरत में सिवाय जहन्नम के उसके लिए और कुछ नहीं होगा।

आयत 19

وَمَنْ اَرَادَ الْاٰخِرَةَ وَسَعٰى لَهَا سَعْيَهَا وَهُوَ مُؤْمِنٌ

"और जो कोई आख़िरत का तलबगार हो, और उसके लिए उसके शायाने-शान कोशिश करे और वो मोमिन भी हो"

यानि उसकी यह तलब सिर्फ़ ज़बानी दावा तक महदूद ना हो, बल्कि हसूले आख़िरत के लिये वो ठोस और हक़ीक़ी कोशिश भी करे, जैसा कि कोशिश करने का हक़ है। और फिर यह भी ज़रूरी है कि वह अहले ईमान में से हो, क्योंकि ईमान के बग़ैर अल्लाह के यहाँ बड़ी से बड़ी नेकी भी क़ाबिले क़ुबूल नहीं है।

فَاُولٰٓئِكَ كَانَ سَعْيُهُمْ مَّشْكُوْرًا ﴿١٩﴾

"तो यही लोग होंगे जिनकी कोशिश की क़दर अफ़ज़ाई की जायेगी।"

اللهم ربنا اجعلنا منهم- यह आयत हम में से हर एक के लिए लिट्मस टेस्ट है। इस टेस्ट की मदद से हर शख़्स ठीक से मालूम कर सकता है कि वो अपनी ज़िंदगी के किस मोड़ पर है, किस हैसियत से खड़ा है? चुनाँचे हर इंसान को चाहिए कि वो अपनी मन्सूबा बंदियों और शबों-रोज़ भाग-दौड़ की तरजीहात का तजज़िया करके अपना अहतसाब करे कि वो किस क़दर

दुनिया का तालिब है और किस हद तक फ़लाहे आख़िरत को पाने का ख़्वाहिशमंद? बहरहाल दुनिया पर आख़िरत को तरजीह देना और फिर अपने क़ौल व फ़अल से अपनी तरजीहात को साबित करना एक कठिन और दुश्वार काम है। अल्लाह तआला हम में से हर एक को इसकी अहमियत और तौफ़ीक़ अता फ़रमाए। आमीन!

आयत 20

كُلًّا نُّمِدُّ هٰٓؤُلَآءِ وَهٰٓؤُلَآءِ مِنْ عَطَآءِ رَبِّكَ ؕ

"हम सबको मदद पहुँचाए जा रहे हैं, इनको भी और उनको भी, आप ﷺ के रब की अता से।"

यह दुनिया चूँकि दारुल इम्तिहान है इसलिए जब तक इंसान यहाँ मौजूद हैं, उनमें से कोई मुजरिम हो या इताअत गुज़ार, हर एक की बुनियादी ज़रूरयात पूरी हो रही हैं। यह अल्लाह तआला की ख़ुसूसी नवाज़िश है जिसमें से वो अपने नाफ़रमानों और दुश्मनों को भी नवाज़ रहा है।

وَمَا كَانَ عَطَآءُ رَبِّكَ مَحْظُوْرًا ۝٢٠

"और आपके रब की अता रुकी हुई नहीं है।"

दुनिया में अल्लाह तआला की यह अता और बख़्शिश आम है। इसमें दोस्त और दुश्मन के इम्तियाज़ की बुनियाद पर कोई क़दगन या रोक-टोक नहीं हैं।

आयत 21

اُنْظُرْ كَيْفَ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلٰى بَعْضٍ ؕ

"देखो कैसे हमने बाज़ को बाज़ पर फ़ज़ीलत दी है!"

अल्लाह तआला ने इस दुनिया में बाज़ लोगों को माल व असबाब, ज़हनी व जिस्मानी सलाहियतें, शक्ल व सूरत और मक़ाम व मर्तबे में बाज़ दूसरों पर फ़ज़ीलत दे रखी है। यह उसकी मर्ज़ी और मशीयत का मामला है।

وَلَلْاٰخِرَةُ اَكْبَرُ دَرَجٰتٍ وَّاَكْبَرُ تَفْضِيْلًا ۝٢١

"लेकिन आख़िरत की ज़िन्दगी दर्जात और फ़ज़ीलत में इससे बहुत बढ़ कर होगी।"

दुनिया में तो दर्जात व फ़ज़ाइल जैसे भी हों, जितने भी हों, महदूद ही होगें, मगर आख़िरत की नेअमतें और नवाज़िशें ऐसी ला महदूद और ला मुतनाही होंगी कि उनका मुवाज़ना व मुक़ाबला दुनिया की किसी चीज़ से मुमकिन ही नहीं होगा। यहाँ एक शख़्स बीस-पच्चीस साल कुटिया में रह लेगा और एक दूसरा शख़्स इतना ही अरसा महल में रह लेगा तो क्या फ़र्क़ वाक़ेअ हो जायेगा? आखिरकार तो दोनों को यहाँ से जाना है लेकिन आखिरत के आराम व आसाइश अब्दी होंगे। वहाँ के नेअमतों के बाग़ात की अपनी ही शान होगी: {فَرَوْحٌ وَّرَيْحَانٌ ۙ وَّجَنَّتُ نَعِيْمٍ} (अल् वाक़िआ:89) "तो (उसके लिए) आराम और ख़ुशबुदार फूल और नेअमत के हैं।"

आयत 22

لَا تَجْعَلْ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ فَتَقْعُدَ مَذْمُوْمًا مَّخْذُوْلًا ۝٢٢

"अल्लाह के साथ किसी और को मअबूद ना बनाओ, कि फिर बैठे रह जाओगे मज़मूम व बेसहारा होकर।"

आइंदा दो रुकूक़ इस लिहाज़ से बहुत अहम हैं कि उनमें तौरात के अहकामे अशरह (Ten Commandments) को क़ुरानी असलूब में बयान किया गया है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि. के नज़दीक इन अहकाम के अंदर तौरात की तालीमात का निचोड़ है। इन अहकाम का ख़ुलासा हम

सूरहतुल अन्आम के आख़री हिस्से में भी पढ़ आये हैं। यहाँ पर वही बातें ज़रा तफ़सील से बयान हुई हैं।

आयात 23 से 40 तक

وَقَضٰى رَبُّكَ اَلَّا تَعْبُدُوْٓا اِلَّآ اِيَّاهُ وَبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا ؕ اِمَّا يَبْلُغَنَّ عِنْدَكَ الْكِبَرَ
اَحَدُهُمَآ اَوْ كِلٰهُمَا فَلَا تَقُلْ لَّهُمَآ اُفٍّ وَّلَا تَنْهَرْهُمَا وَقُلْ لَّهُمَا قَوْلًا كَرِيْمًا ۝٢٣
وَاخْفِضْ لَهُمَا جَنَاحَ الذُّلِّ مِنَ الرَّحْمَةِ وَقُلْ رَّبِّ ارْحَمْهُمَا كَمَا رَبَّيٰنِيْ صَغِيْرًا ؕ ۝٢٤
رَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِمَا فِيْ نُفُوْسِكُمْ ؕ اِنْ تَكُوْنُوْا صٰلِحِيْنَ فَاِنَّهٗ كَانَ لِلْاَوَّابِيْنَ غَفُوْرًا
۝٢٥ وَاٰتِ ذَا الْقُرْبٰى حَقَّهٗ وَالْمِسْكِيْنَ وَابْنَ السَّبِيْلِ وَلَا تُبَذِّرْ تَبْذِيْرًا ۝٢٦ اِنَّ
الْمُبَذِّرِيْنَ كَانُوْٓا اِخْوَانَ الشَّيٰطِيْنِ ؕ وَكَانَ الشَّيْطٰنُ لِرَبِّهٖ كَفُوْرًا ۝٢٧ وَاِمَّا
تُعْرِضَنَّ عَنْهُمُ ابْتِغَآءَ رَحْمَةٍ مِّنْ رَّبِّكَ تَرْجُوْهَا فَقُلْ لَّهُمْ قَوْلًا مَّيْسُوْرًا ۝٢٨ وَلَا
تَجْعَلْ يَدَكَ مَغْلُوْلَةً اِلٰى عُنُقِكَ وَلَا تَبْسُطْهَا كُلَّ الْبَسْطِ فَتَقْعُدَ مَلُوْمًا مَّحْسُوْرًا
۝٢٩ اِنَّ رَبَّكَ يَبْسُطُ الرِّزْقَ لِمَنْ يَّشَآءُ وَيَقْدِرُ ؕ اِنَّهٗ كَانَ بِعِبَادِهٖ خَبِيْرًا بَصِيْرًا ۝٣٠
وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَوْلَادَكُمْ خَشْيَةَ اِمْلَاقٍ ؕ نَحْنُ نَرْزُقُهُمْ وَاِيَّاكُمْ ؕ اِنَّ قَتْلَهُمْ كَانَ خِطْاً
كَبِيْرًا ۝٣١ وَلَا تَقْرَبُوا الزِّنٰٓى اِنَّهٗ كَانَ فَاحِشَةً ؕ وَسَآءَ سَبِيْلًا ۝٣٢ وَلَا تَقْتُلُوا
النَّفْسَ الَّتِيْ حَرَّمَ اللّٰهُ اِلَّا بِالْحَقِّ ؕ وَمَنْ قُتِلَ مَظْلُوْمًا فَقَدْ جَعَلْنَا لِوَلِيِّهٖ سُلْطٰنًا
فَلَا يُسْرِفْ فِّي الْقَتْلِ ؕ اِنَّهٗ كَانَ مَنْصُوْرًا ۝٣٣ وَلَا تَقْرَبُوْا مَالَ الْيَتِيْمِ اِلَّا بِالَّتِيْ هِيَ
اَحْسَنُ حَتّٰى يَبْلُغَ اَشُدَّهٗ ۠ وَاَوْفُوْا بِالْعَهْدِ ۠ اِنَّ الْعَهْدَ كَانَ مَسْئُوْلًا ۝٣٤ وَاَوْفُوا
الْكَيْلَ اِذَا كِلْتُمْ وَزِنُوْا بِالْقِسْطَاسِ الْمُسْتَقِيْمِ ؕ ذٰلِكَ خَيْرٌ وَّاَحْسَنُ تَاْوِيْلًا ۝٣٥ وَلَا
تَقْفُ مَا لَيْسَ لَكَ بِهٖ عِلْمٌ ؕ اِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ اُولٰٓئِكَ كَانَ عَنْهُ
مَسْئُوْلًا ۝٣٦ وَلَا تَمْشِ فِي الْاَرْضِ مَرَحًا ۚ اِنَّكَ لَنْ تَخْرِقَ الْاَرْضَ وَلَنْ تَبْلُغَ
الْجِبَالَ طُوْلًا ۝٣٧ كُلُّ ذٰلِكَ كَانَ سَيِّئُهٗ عِنْدَ رَبِّكَ مَكْرُوْهًا ۝٣٨ ذٰلِكَ مِمَّآ اَوْحٰٓى
اِلَيْكَ رَبُّكَ مِنَ الْحِكْمَةِ ؕ وَلَا تَجْعَلْ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ فَتُلْقٰى فِيْ جَهَنَّمَ مَلُوْمًا
مَّدْحُوْرًا ۝٣٩ اَفَاَصْفٰىكُمْ رَبُّكُمْ بِالْبَنِيْنَ وَاتَّخَذَ مِنَ الْمَلٰٓئِكَةِ اِنَاثًا ؕ اِنَّكُمْ
لَتَقُوْلُوْنَ قَوْلًا عَظِيْمًا ۝٤٠

आयत 23

وَقَضٰى رَبُّكَ اَلَّا تَعْبُدُوْٓا اِلَّآ اِيَّاهُ وَبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا ؕ

"और फ़ैसला कर दिया है आप ﷺ के रब ने कि मत इबादत करो किसी की सिवाय उसके, और वालिदैन के साथ हुस्ने सुलूक करो।"

अल्लाह के हुक़ूक़ के फौरन बाद वालिदैन के हुक़ूक़ अदा करने की ताकीद इससे पहले हम सूरतुल बक़रह की आयत 83 और सूरतुन्निसा की आयत 36 में भी पढ़ आये हैं। इसके बाद सूरह लुक़मान की आयत 14 में यही हुक्म चौथी मर्तबा आयेगा।

اِمَّا يَبْلُغَنَّ عِنْدَكَ الْكِبَرَ اَحَدُهُمَآ اَوْ كِلٰهُمَا

"अगर पहुँच जायें तुम्हारे पास बुढ़ापे को उनमें से कोई एक या दोनों"

فَلَا تَقُلْ لَّهُمَآ اُفٍّ وَّلَا تَنْهَرْهُمَا وَقُلْ لَّهُمَا قَوْلًا كَرِيْمًا ۝٢٣

"तो उन्हें उफ़्फ़ तक मत कहो और ना उन्हें झिड़को, और उनसे बात करो नर्मी के साथ।"

अगर कभी वालिदैन की बात को टालना भी पड़ जाये तो हिकमत और नर्मी के साथ ऐसा किया जाये। अक़्ल और मन्तिक़ के बल पर सीना तान कर यूँ जवाब ना दिया जाये कि उनका दिल दुखे।

आयत 24

وَاخْفِضْ لَهُمَا جَنَاحَ الذُّلِّ مِنَ الرَّحْمَةِ

"और झुकाए रखो उनके सामने अपने बाज़ू आजिज़ी और नियाज़मंदी से"

जब भी अपने वालिदैन के सामने आओ तो तुम्हारी चाल-ढ़ाल और गुफ़्तगू के अंदाज़ से आजिज़ी व इंकसारी और अदब व अहतराम का इज़हार होना चाहिए।

وَقُلْ رَّبِّ ارْحَمْهُمَا كَمَا رَبَّيٰنِي صَغِيرًا ﴿٢٤﴾

"और दुआ करते रहो: ऐ मेरे रब इन दोनों पर रहम फ़रमा जैसे कि इन्होंने मुझे बचपन में पाला।"

अल्लाह तआला के हुज़ूर हर वक़्त उनके लिए दुआ गोह रहना चाहिए कि ऐ अल्लाह जब मैं ज़ईफ़, कमज़ोर और मोहताज था तो इन्होंने मेरी ग़िज़ा, मेरे आराम और मेरी दूसरी ज़रूरतों का इन्तज़ाम किया। मेरी तकलीफ़ को अपनी तकलीफ़ समझा और मेरे लिए अपने आराम व आराईश को क़ुर्बान किया। अब मैं तो इनके इन अहसानात का बदला नहीं चुका सकता। इसलिए मैं तुझी से दरख़्वास्त करता हूँ कि तू उन पर रहम फरमा और अपनी ख़ुसूसी शफक्क़त और मेहरबानी से उनकी ख़ताओं को माफ़ फ़रमा दे।

आयत 25

رَبُّكُمْ أَعْلَمُ بِمَا فِي نُفُوسِكُمْ ۚ إِن تَكُونُوا صَالِحِينَ فَإِنَّهُ كَانَ لِلْأَوَّابِينَ غَفُورًا ﴿٢٥﴾

"तुम्हारा रब ख़ूब वाक़िफ़ है उससे जो तुम्हारे दिलों में है। अगर तुम वाक़ई नेक होगे तो वो (अपनी तरफ़) रुजूअ करने वालों के लिए बड़ा बख़्शने वाला है।"

बूढ़े वालिदैन के साथ हुस्ने सुलूक के हुक्म पर कमा-हक़्क़ा अमल करना आसान काम नहीं। बुढ़ापे में इंसान पर "अरज़ले उम्र" का मरहला भी आता है, जिसके बारे में हम पढ़ आये हैं: { لِكَيْ لَا يَعْلَمَ بَعْدَ عِلْمٍ شَيْئًا } (अल् नहल:70)। ऐसी कैफ़ियत में कभी बच्चों की सी आदतें लौट आती हैं और उनकी बहुत सी बातें नाक़ाबिले अमल और अक्सर अहकाम नाक़ाबिले तामील होते हैं। कहीं उन्हें समझाना भी पड़ता है और कभी रोकने-टोकने की नौबत भी आ जाती है। इन सब मराहिल में कोशिश के बावजूद कहीं ना कहीं कोई गलती हो ही जाती है और कभी ना कभी कोई कोताही रह ही जाती है। यहाँ उस सयाक़ व सबाक़ में बताया जा रहा है कि अल्लाह तआला सिर्फ़ तुम्हारे ज़ाहिरी अमल और रवैय्ये ही को नहीं देखता बल्कि वो तुम्हारे दिलों की नीयतों को भी जानता है। चुनाँचे अगर बंदे के दिल का रुजूअ अल्लाह की तरफ़ हुआ और नी उसकी नाफ़रमानी की ना हो तो छोटी-मोटी लग़ज़िशों को वह माफ़ फ़रमाने वाला है।

आयत 26

وَآتِ ذَا الْقُرْبَىٰ حَقَّهُ وَالْمِسْكِينَ وَابْنَ السَّبِيلِ وَلَا تُبَذِّرْ تَبْذِيرًا ﴿٢٦﴾

"और हक़ अदा करो क़राबत दारों, मिस्कीनों और मुसाफ़िरों का और फ़ज़ूल में माल मत उड़ाओ।"

तब्ज़ीर के मायने बिला ज़रुरत माल उड़ाने के हैं और यह इसराफ़ से बड़ा जुर्म है। इसराफ़ तो यह है कि किसी ज़रुरत में ज़रुरत से ज़ायद ख़र्च किया जाये। मसलन खाना खाना एक ज़रुरत है और यह ज़रुरत दो रोटियों और

थोड़े से सालन से बख़ूबी पूरी हो जाती है, मगर इसी ज़रुरत के लिए कई-कई खानों पर मुश्तमिल दस्तरख्वान सजा दिये जायें तो यह इसराफ़ है। इसी तरह कपड़ा इंसान की ज़रुरत है जिसके लिए एक-दो जोड़े काफी हैं। अब अगर अलमारियों की अलमारियाँ तरह-तरह के जोड़ों, सूटों और पोशाकों से भरी पड़ी रहें है तो यह इसराफ़ के ज़ुमरे में आयेगा। इसराफ़ के मुक़ाबले में तब्ज़ीर से मुराद ऐसे बेतहासा अख़राजात हैं जिनकी सिरे से ज़रुरत ही ना हो, मसलन शादी ब्याह की रस्मों पर बेहिसाब ख़र्च करना और नाम व नमूद के लिए तरह-तरह के मौक़े पैदा करके उन पर माल व दौलत को ज़ाया करना तब्ज़ीर है।

आयत 27

إِنَّ الْمُبَذِّرِينَ كَانُوا إِخْوَانَ الشَّيَاطِينِ ۖ

"यक़ीनन माल को फ़ज़ूल उड़ाने वाले श्यातीन के भाई हैं।"

यहाँ पर मुबज्ज़रीन को जो श्यातीन के भाई क़रार दिया गया है, इसकी मन्तिक़ और बुनियाद क्या है? यह बात जब मेरी समझ में आई तो मुझ पर क़ुरान के ऐजाज़ का एक नया पहलु मुन्कशिफ़ हुआ। सूरह मायदा में अल्लाह तआला का फरमान है: {إِنَّمَا يُرِيدُ الشَّيْطَانُ أَنْ يُوقِعَ بَيْنَكُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَاءَ فِي الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ} (आयत 91) "शैतान तो यही चाहता है कि तुम्हारे दरमियान दुश्मनी व बुग्ज़ पैदा करे शराब और जुए के ज़रिए से...." इस आयत के मज़मून पर ग़ौर करने से यह हक़ीक़त समझ में आती है कि शराब और जुआ शैतान के वो ख़तरनाक हथियार हैं जिनकी मदद से वो इंसानों के दरमियान बुग्ज़ व अदावत की आग को भड़का कर अपने एजेंडे की तकमील चाहता है। चुनाँचे अगर शैतान का हदफ़ इंसानों के दिलों में एक-दूसरे के ख़िलाफ़ बुग्ज़ और अदावत के जज़्बात पैदा करना है तो उसका यह हदफ़ तब्ज़ीर के अमल से भी बख़ूबी पूरा हो जाता है और यूँ "मुबज्ज़रीन" इस मक्र व एजेंडे की तकमील के लिए शैतान के कंधे से कंधा और उसके क़दम से क़दम मिलाये सरगर्मे अमल नज़र आते हैं। इस तल्ख़ हक़ीक़त को एक मिसाल से समझें। ज़रा तसव्वुर करें कि एक सेठ साहब की बेटी की शादी के मौक़े पर उसकी कोठी बक़ा-ए-नूर बनी हुई है, खूब धूम-धड़ाका है और महज़ नमूद व नुमाईश के लिए माल व दौलत को बेदरीग लुटाया जा रहा है। दूसरी तरफ इसी सेठ साहब का एक मुलाज़िम है जो सिर्फ़ अपनी गुरबत के सबब अपनी बेटी के हाथ पीले नहीं कर पा रहा और सेठ साहब के यह तमाम तब्ज़ीरी चलन अपनी आँखों से देख रहा है। यह सब कुछ देखते हुए लाज़िमी तौर पर उस गरीब के दिल में नफ़रत, बुग्ज़ और दुश्मनी का लावा जोश मारेगा। अब अगर उसे मौक़ा मिले तो यह आतिश फशाँ पूरी शिद्दत से फटेगा और वो गरीब मुलाज़िम अपने मालिक का पेट फाड़ कर उसकी दौलत हासिल करने की कोशिश करेगा। इसी तरह फ़ज़ूल लुटाई जाने वाली दौलत की नुमाईश से अमरा के ख़िलाफ़ मआशरे के महरूम लोगों के दिलों में बुग्ज़ व अदावत और नफ़रत की आग भड़कती है और यूँ शैतान के एजेंडे की तकमील होती है। इसी शैतानी एजेंडे की तकमील के लिए मुआवनीन का किरदार अदा करने के बाइस मुबज्ज़रीन को यहाँ इख्वानुश्शयातीन क़रार दिया गया है।

وَكَانَ الشَّيْطَانُ لِرَبِّهِ كَفُورًا ﴿٢٧﴾

"और यक़ीनन शैतान अपने रब का बहुत ही नाशुक्रा है।"

आयत 28

وَإِمَّا تُعْرِضَنَّ عَنْهُمُ ابْتِغَاءَ رَحْمَةٍ مِّن رَّبِّكَ تَرْجُوهَا

"और अगर तुम्हें ऐराज़ करना ही पड़ जाये उनसे अपने रब की रहमत के इंतेज़ार में जिसकी तुम्हें उम्मीद है"

कभी यूँ भी होता है कि कोई मोहताज अपनी किसी हाजत बरआरी के लिए ऐसे मौक़े पर आपके पास आता है जब आपके पास भी उसे देने के लिए

कुछ नहीं होता। आपको अल्लाह तआला से अच्छे दिनों और फ़राख़दस्ती की उम्मीद तो है मगर वक़्ती तौर पर आप साइल की हाजत से ऐराज़ करने पर मज़बूर हैं और चाहते हुए भी उसकी मदद नहीं कर सकते। अगर तुम्हें किसी वक़्त ऐसी सूरतेहाल का सामना हो:

"तो उनसे कहो नर्म बात।" فَقُلْ لَّهُمْ قَوْلًا مَّيْسُوْرًا ﴿٢٨﴾

ऐसे मौक़े पर साइल को झिड़को नहीं, बल्कि मतानत और शराफ़त से मुनासिब अल्फ़ाज़ में उससे माज़रत कर लो।

आयत 29

"और ना बाँध लो अपने हाथ को अपनी गर्दन के साथ" وَلَا تَجْعَلْ يَدَكَ مَغْلُوْلَةً اِلٰى عُنُقِكَ

यह इस्तआरा है बुख्ल और कंजूसी का। यानि आप अपने हाथ को अपनी गर्दन के साथ बाँध कर किसी को कुछ देने से खुद को माज़ूर ना कर लें।

"और ना उसे बिल्कुल ही खुला छोड़ दो" وَلَا تَبْسُطْهَا كُلَّ الْبَسْطِ

बाज़ अवक़ात इंसान के अंदर नेकी का जज़्बा इस क़दर जोश खाता है कि वो अपना सब कुछ अल्लाह की राह में लुटा देना चाहता है।

"कि फिर बैठे रहो मलामत ज़दा हारे हुए।" فَتَقْعُدَ مَلُوْمًا مَّحْسُوْرًا ﴿٢٩﴾

ऐसा ना हो कि एक वक़्त में तो जज़्बात में आकर इंसान सारा माल क़ुर्बान कर दे मगर बाद में पछताए कि यह मैंने क्या कर दिया? अब क्या होगा? अब मेरी अपनी ज़रूरियात कहाँ से पूरी होंगी? चुनाँचे इंसान को हर हाल में ऐतदाल की रविश इख़्तियार करनी चाहिए।

आयत 30

"यक़ीनन तुम्हारा रब कुशादा करता है रिज़्क़ जिसके लिए चाहता है और तंग करता है (जिसके लिए चाहता है)।" اِنَّ رَبَّكَ يَبْسُطُ الرِّزْقَ لِمَنْ يَّشَآءُ وَيَقْدِرُ ۭ

बाज़ अवक़ात अल्लाह का कोई बंदा चाहता है कि मैं कोशिश करके अपने फलाँ नादार रिश्तेदार के हालात बेहतर कर दूँ, मगर उसकी पूरी कोशिश के बावजूद उसके हालात नहीं सुधरते। ऐसी कैफियत के बारे में फ़रमाया गया कि किसी के रिज़्क़ की तंगी और फ़राखी का फैसला अल्लाह तआला करता है, इसमें तुम लोगों को कुछ इख़्तियार नहीं। लिहाज़ा तुम लोग अपनी सी कोशिश करते रहो और नताइज अल्लाह पर छोड़ दो।

"यक़ीनन वो अपने बंदों की खबर रखने वाला (और उनके हालात को) देखने वाला है।" اِنَّهٗ كَانَ بِعِبَادِهٖ خَبِيْرًۢا بَصِيْرًا ﴿٣٠﴾

आयत 31

"और अपनी औलाद को क़त्ल ना करो मुफ़्लिसी के अंदेशे से।" وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَوْلَادَكُمْ خَشْيَةَ اِمْلَاقٍ ۭ

क़दीम ज़माने में क़त्ले औलाद का मुहर्रक (प्रोत्साहन) इफ्लास (गरीबी) का खौफ़ हुआ करता था। आज-कल हमारे यहाँ बर्थ कंट्रोल और अबादी के मन्सूबे बंदी के बारे में जो इज्तमाई सोच पाई जाती है और उस सोच के मुताबिक़ इंफ़रादी और इज्तमाई सतह पर जो कोशिशें हो रही हैं उनकी कई सूरतें भी इस आयत के हुक्म में आती हैं। इस सिलसिले में मज्मुई तौर पर कोई एक हुक्म नहीं लगाया जा सकता। इसकी तमाम सूरतें हराम मुतलक़ नहीं, बल्कि बाज़ सूरतें जायज़ भी हैं, जबकि बाज़ मकरूह और

बाज़ हराम। मगर ऐसी सोच को एक इज्तमाई तहरीक की सूरत में मुनज्ज़म करना बहरहाल ईमान और तवक्कुल अल्लल्लाह की नफ़ी है। इस कोशिश का सीधा और साफ़ मतलब यह है कि इंसान को अल्लाह के राज़िक़ होने पर ईमान व यक़ीन नहीं और वो ख़ुद अपनी जमा तफ़रीक़ से हिसाब पूरा करने की कोशिश करना चाहता है। दरअसल इंसान अल्लाह के खज़ानों और वसाइल की वुसअतों का कुछ अंदाज़ा नहीं कर सकता और उसे अपनी इस कोताही और माज़ूरी का अदराक होना चाहिए। मसलन कुछ अरसा पहले तक इंसान को अंदाज़ा नहीं था कि समुद्र के अंगर इंसानी गिज़ा के किस क़द्र वसीअ ख़ज़ाने पोशीदा हैं और उसे यह भी मालूम नहीं था कि समुद्री गोश्त {لَحْمًا طَرِيًّا} (नहल:14 और फ़ातिर:12) की अफ़ादियत इंसानी सेहत के लिए red meat के मुक़ाबले में किस क़दर ज़्यादा है।

इस ज़िमन में एक अहम बात यह जानने की है कि मुख़्तलिफ़ मानाअ हमल तरीक़ों और कोशिशों पर "क़त्ले औलाद" के हुक्म का इतलाक़ नहीं होता, लेकिन बाक़ायदा हमल ठहर जाने के बाद उसे ज़ाया करना बहरहाल क़त्ल के ज़ुमरे में ही आता है।

"हम उसको भी रिज़्क़ देंगे और तुम्हें भी।" نَحْنُ نَرْزُقُهُمْ وَاِيَّاكُمْ ؕ

तुम यह समझते हो कि तुम्हें जो रिज़्क़ मिल रहा है वो तुम्हारी अपनी मेहनत और मन्सूबा बंदी का नतीजा है। ऐसा हरगिज़ नहीं, तुम्हारे हक़ीक़ी राज़िक़ हम हैं और जैसे हम तुम्हें रिज़्क़ दे रहे हैं उसी तरह तुम्हारी औलाद के रिज़्क़ का बंदोबस्त भी हमारे ज़िम्मे है।

"यक़ीनन उनको क़त्ल करना बहुत बड़ी ख़ता है।" اِنَّ قَتْلَهُمْ كَانَ خِطْاً كَبِيْرًا ۝٣١

आयत 32

"और ज़िना के क़रीब भी मत जाओ" وَلَا تَقْرَبُوا الزِّنٰٓى

यहाँ "ज़िना मत करो" के बजाय वो हुक्म दिया जा रहा है जिसमें इंतहाई अहतियात का मफ़हूम पाया जाता है कि ज़िना के क़रीब भी मत फ़टको। यानि हर उस मामले से ख़ुद को महफ़ूज़ फ़ासले पर रखो जो तुम्हें ज़िना तक ले जाने या पहुँचाने का सबब बन सकता हो।

"यक़ीनन यह बहुत बेहयाई का काम है, और बहुत ही बुरा रास्ता है।" اِنَّهٗ كَانَ فَاحِشَةً ؕ وَسَآءَ سَبِيْلًا ۝٣٢

आयत 33

"और मत क़त्ल करो उस इंसानी जान को जिसे अल्लाह ने मोहतरम ठहराया है मगर हक़ के साथ।" وَلَا تَقْتُلُوا النَّفْسَ الَّتِىْ حَرَّمَ اللّٰهُ اِلَّا بِالْحَقِّ ؕ

यहाँ "हक़" से मुराद चंद वो सूरतें हैं जिनमें इंसानी जान का क़त्ल जायज़ है। उनमें खून का बदला खून, इस्लामी रियासत में मुर्तद की सज़ा मौत, शादी शुदा ज़ानी और ज़ानिया का रज्म और हर्बी काफ़िर का क़त्ल शामिल है।

"और जिसे क़त्ल कर दिया गया मज़्लूमी में, तो उसके वली को हमने इख़्तियार दिया है" وَمَنْ قُتِلَ مَظْلُوْمًا فَقَدْ جَعَلْنَا لِوَلِيِّهٖ سُلْطٰنًا

इस्लामी क़ानून में मक़तूल के वुरसा को इख़्तियार है कि वो जान के बदले जान की सज़ा पर इसरार करें या माफ़ कर दें या फिर खून बहा ले लें। यह

तीनो इख़्तियारात मक़तूल के वुरसा ही को हासिल हैं। किसी अदालत या सरबराहे मम्लकत को इसमें कुछ इख़्तियार नहीं।

فَلَا يُسْرِفْ فِّي الْقَتْلِ ؕ

"तो वो भी क़त्ल में हद से तजावुज़ ना करे।"

यानि जान के बदले जान का फ़ैसला हो तो उसमें तजावुज़ करने की इजाज़त नहीं है। ऐसा ना हो कि एक आदमी के बदले मुख़ालिफ़ फ़रीक़ के ज़्यादा लोग क़त्ल कर दिए जायें, तरीक़ा-ए-क़त्ल में किसी क़िस्म की ज़्यादती की जाये या किसी भी अंदाज़ में अपने इस इख़्तियार का नाजायज़ इस्तेमाल किया जाये।

اِنَّهٗ كَانَ مَنْصُوْرًا ﴿۳۳﴾

"उसकी मदद की जायेगी।"

क़ातिल को पकड़ने, उस पर मुक़दमा चलाने और इंसाफ़ दिलाने तक के तवील और पेचीदा अमल में हर मरहले पर मक़तूल के वुरसा की मदद करना रियासत की ज़िम्मेदारी है। इस सिलसिले में एक अहम नुक़्ता यह है कि क़त्ल के मुक़द्दमात में रियासत या हुकूमत मुद्दई नहीं बनेगी, बल्कि मक़तूल के वुरसा ही मुद्दई होंगे। हमारे यहाँ जो "सरकार बनाम फलाँ" के उन्वान से मुक़दमा बनता है वो मामला सरासर ग़ैर इस्लामी है।

आयत 34

وَلَا تَقْرَبُوْا مَالَ الْيَتِيْمِ اِلَّا بِالَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ

"और मत क़रीब जाओ यतीम के माल के मगर अहसन तरीक़े से"

यह आयत क़ब्ल अजें हम सूरतुल अन्आम (आयत 152) में भी पढ़ चुके हैं। यानि यतीम के माल को हड़प करने, उससे नाजायज़ फ़ायदा उठाने या उसे ज़ाया करने की कोशिश ना करो, बल्कि उसकी हिफ़ाज़त करो और उसे हर तरह से सम्भाल कर रखो:

حَتّٰى يَبْلُغَ اَشُدَّهٗ

"यहाँ तक कि वो अपनी जवानी को पहुँच जाये"

وَاَوْفُوْا بِالْعَهْدِ ۚ اِنَّ الْعَهْدَ كَانَ مَسْـُٔوْلًا ﴿۳۴﴾

"और अहद को पूरा करो, यक़ीनन अहद के बारे में बाज़-पुर्स होगी।"

आयत 35

وَاَوْفُوا الْكَيْلَ اِذَا كِلْتُمْ وَزِنُوْا بِالْقِسْطَاسِ الْمُسْتَقِيْمِ ؕ

"और जब तुम नापो तो पैमाना पूरा भरो, और वज़न को सीधी तराज़ू के साथ।"

ذٰلِكَ خَيْرٌ وَّاَحْسَنُ تَاْوِيْلًا ﴿۳۵﴾

"यही बेहतर है और अंजाम के ऐतबार से भी ख़ूबतर है।"

अगर तुम नाप-तौल पूरा करते हो और लेन-देन के तमाम मामलात दयानत दारी से सरअंजाम देते हो तो हज़रत शोऐब अलै. के फ़रमान के मुताबिक़: {بَقِيَّتُ اللّٰهِ خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۚ} (हूद:86) "अल्लाह का दिया हुआ मुनाफ़ा ही तुम्हारे लिए बेहतर है अगर तुम ईमान वाले हो।" दयानतदारी से कमाया हुआ मुनाफ़ा थोड़ा भी होगा तो अल्लाह तआला उसमें बरकत अता करेगा।

आयत 36

وَلَا تَقْفُ مَا لَيْسَ لَكَ بِهٖ عِلْمٌ ؕ

"और मत पीछे पड़ो उस चीज़ के जिसके बारे में तुम्हें इल्म नहीं।"

बहैसियत अशरफ़ुल मख़्लुक़ात इंसान का तर्ज़े अमल ख़ालिस इल्म पर मब्नी होना चाहिए। उसे ज़ेब नहीं देता कि वो अपने किसी अमल या नज़रिये की बुनियाद तोहमतों पर रखे या ऐसी मालूमात को लायक़-ए-ऐतनाअ समझे जिनकी कोई इल्मी सनद ना हो। मगर सवाल पैदा होता है कि खुद इंसानी इल्म की बुनियाद और उसका मिम्बा क्या है? इस सिलसिले में हम जानते हैं कि बुनियादी तौर पर इंसानी इल्म की दो अक़साम हैं। एक इकतसाबी इल्म (acquired knowledge) और दूसरा इल्हामी इल्म (revealed knowledge)। इकतसाबी इल्म की बुनियाद वही इल्मुल अस्माअ है जो अल्लाह तआला ने हज़रत आदम अलै. को सिखाया था और जिसका ज़िक्र हम सूरतुल बक़रह के चौथे रुकूअ में पढ़ आये हैं। इस इल्म का ताल्लुक़ इंसानी हवास और ज़हन से है। इंसान अपने हवास की मदद से यह इल्म हासिल करके अपने ज़हन में महफ़ूज़ करता रहता है। ज्यों-ज्यों इंसान के तजुर्बे और मुशाहिदे का दायरा फैलता है इस इल्म में भी तौसीअ होती जाती है और यूँ यह इल्म कुर्रा-ए-अर्ज़ पर इंसानी ज़िन्दगी के रोज़े अव्वल से लेकर आज तक मुसलसल इरतक़ाअ पज़ीर है। दूसरी तरफ़ इल्हामी इल्म है जिसका इंसान के हवास से क़तअन कोई ताल्लुक़ नहीं। इस इल्म के तमाम ज़राय मसलन वही (जली या ख़फ़ी) "इल्हाम" कश्फ़ और रुअया-ए-सादक़ा (सच्चे ख़्वाब) का ताल्लुक़ इंसान के हैवानी वजूद के बजाय उसके रूहानी वजूद से है। इंसानी रूह इस इल्म को बराहेरास्त मौसूल करती है और इसका मसकन व मरकज़ इंसानी क़ल्ब है। इस सिलसिले में दूसरा अहम नुक़्ता यह है कि अंबिया अलै. पर नाज़िल होने वाली वही, चाहे जली हो या ख़फ़ी, नुबुवत का हिस्सा है और इल्मी लिहाज़ से एक क़तई दलील या बुरहाने क़ातअ है। लेकिन किसी आम शख़्स को वही ख़फ़ी, इल्हाम या कश्फ़ के ज़रिए मिलने वाला इल्म दूसरों के लिए कोई इल्मी दलील फ़राहम नहीं करता। ऐसा इल्म सिर्फ़ मुताल्क़ा शख़्स के लिए दलील हो सकता है और वो भी सिर्फ़ उस सूरत में जब वह खिलाफ़े शरीअत ना हो। इस हवाले से देखा जाये तो आयत ज़ेरे नज़र में इंसान का इकतसाबी इल्म ज़ेरे बहस है।

اِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ اُولٰٓئِكَ كَانَ عَنْهُ مَسْئُوْلًا ۝

"यक़ीनन समाअत, बसारत और अक़्ल सभी के बारे में बाज़पुर्स की जायेगी।"

अल्लाह तआला ने इंसान को इल्म के इकतसाब व इस्तेमाल के लिए हवासे ख़म्सा (जिनमें से दो अहमतरीन हवास का ज़िक्र यहाँ किया गया है) और अक़्ल से नवाज़ा है और इस लिहाज़ से उसकी इन सलाहियतों का अहतसाब भी होगा। यहाँ पर लफ्ज़ फ़ुआद बहुत अहम है जिसकी वज़ाहत ज़रुरी है। आम तौर पर इस लफ्ज़ का तर्जुमा "दिल" किया गया है, मगर इस तर्जुमे के लिए कोई लुग्वी बुनियाद मौजूद नहीं। इस लफ्ज़ का माद्दा वही है जिससे लफ्ज़ फ़ायदा मुश्तक़ है और लफ्ज़ फ़ायदा के मायने किसी चीज़ के उस जौहर या लुब्बे-लुबाब के हैं जो उस चीज़ में असल मक़सूद होता है। पुराने दौर की कुतुब (किताबों) में यह अंदाज़ आम मिलता है कि कोई हिकायत या रिवायत बयान करने के बाद उसका नतीजा बयान करने के लिए लफ्ज़ फ़ायदा या सिर्फ़ "फ़" लिख दिया जाता था। इससे यह वाज़ेह होता है कि किसी तफ़्सील के खुलासे या किसी काम के नतीजे को फ़ायदा कहा जाता है। लफ्ज़ "फ़ईद" भी इसी माद्दे से मुस्तक़ है। अरबी में "फ़ईद" किसी सब्ज़ी या गोश्त वग़ैरह की भुजिया को कहा जाता है और इस लफ्ज़ (फ़ईद) में भी नतीजा या खुलासा वग़ैरह का मफ़हूम पाया जाता है। यानि गोश्त वग़ैरह को उबालने व भूनने से जब उसका फालतु पानी खुश्क हो जाता है तब उसमें से बहुत थोड़ी मिक़दार में वो चीज़ हासिल होती है जिस पर लफ्ज़ फ़ईद का इतलाक़ होता है।

इस लुग्वी वज़ाहत के बाद लफ्ज़ "फ़ुआद" के मफ़हूम और इंसानी हवास के साथ इसके ताल्लुक़ को समझने में आसानी होगी। हवासे इंसानी अपने-अपने ज़राय से मालूमात हासिल करके दिमाग तक पहुँचाते हैं।

दिमाग का कंप्यूटर उन मालूमात को process करता है, पहले से मौजूद अपने ज़खीरा-ए-मालूमात के साथ उनका ततावुक़ (tally) या तक़ाबुल (compare) करके इस सारे अमल से कोई नतीजा अख़ज़ करता है और फिर इस नतीजे को अपने ज़खीरा-ए-मालूमात (memory) में महफ़ूज़ (store) कर लेता है। इसी ज़खीरा-ए-मालूमात का नाम इल्म है और इंसान की वो क़ुव्वत या सलाहियत जो इस सारे अमल को मुम्किन बनाती है "फ़ुआद" कहलाने की मुस्तहिक़ है। अरफ़े आम में इस क़ुव्वत या सलाहियत को अक़्ल या शऊर कहा जाता है। चुनाँचे मेरे नज़दीक "फ़ुआद" का दुरुस्त तर्जुमा अक़्ल या शऊर ही है।

इस पूरे तनाज़र में इस आयत का मफ़हूम यह है कि अल्लाह तआला ने इंसान को मुफ़ीद हवास (sense organs) अता किए हैं और इन हवास से हासिल होने वाली मालूमात का तज्ज़िया करने की सलाहियत से उसे नवाज़ा है। अब अगर इंसान अपने इन हवास से इस्तफ़ादा ना करे, अक़्ल व शऊर की सलाहियत से कोई काम ना ले और अपने नज़रियात की बुनियाद तोहमात पर रख ले तो वो बहुत बड़े ज़ुल्म का मुरतकिब होगा। मसलन ज़लज़ले के बारे में कभी लोगो में यह नज़रिया मशहूर था कि हमारी यह ज़मीन एक बैल ने अपने एक सींग पर उठा रखी है। जब वो थक जाता है तो उसे दूसरे सींग पर मुन्तक़िल करता है, जिससे ज़लज़ला आ जाता है। इस मज़हका ख़ैज़ नज़रिये के लिए ना तो क़ुरान व हदीस में कोई दलील मौजूद है और ना ही इंसान के इकतसाबी और तजुर्बाती ऊलूम इसके लिए कोई दलील फ़राहम करते हैं। यही वज़ह है कि इंसान को अपनी सलाहियतों के हवाले से उस हस्ती के सामने जवाबदेह रखा गया है जिसने उसे यह सब कुछ अता किया है। चुनाँचे इंसान को चाहिए कि जिस चीज़ या ख़बर की बुनियाद में इल्हामी या इकतसाबी व तजुर्बाती इल्म की कोई क़तई दलील मौजूद ना हो, उसे क़ाबिले ऐतनाअ ना समझे और अपने फ़कार (फ़िक्र) व नज़रियात की बुनियाद ऐसे ठोस इल्मी हक़ाइक़ पर रखे जिनकी वो साइंटीफिक अंदाज़ में तौशीक़ व तस्दीक़ भी कर सकता हो। यह आयत इस लिहाज़ से बहुत अहम है कि उसने इल्मी मैदान में नौए इंसानी कि रहनुमाई उस रास्ते के तरफ़ की है जो इंसान के शायाने शान है।

यहाँ पर अरस्तू के इस्तख़राजी फ़लसफ़े का ज़िक्र करना भी ज़रुरी मालूम होता है। एक मुद्दत तक पूरी दुनिया में इस फ़लसफ़े का डंका बजता रहा। आलमे इस्लाम में भी यह फ़लसफ़ा बहुत मक़बूल रहा और कई सदियों के बाद जाकर कहीं इसकी गिरफ़्त ढीली हुई है। इस्तख़राजी मन्तिक़ (deductive knowledge) के मुताबिक़ सिर्फ़ दस्तयाब मालूमात से ही नतीजे अख़ज़ किए जाते थे। चुनाँचे किसी मौज़ू पर जो थोड़ी बहुत मालूमात दस्तयाब होती थीं, वक़्त के फ़लसफ़ी और हकीम उन्हीं में से बाल की खाल उतार-उतार कर नतीजे अख़ज़ करते रहते थे। इसके मुक़ाबले में क़ुरान ने इस्तक़राई मन्तिक़ (inductive knowledge) का फ़लसफ़ा मुताअ'रिफ़ कराया और इंसान को मुशाहिदे (observation) और तजुर्बे की मदद से मुसलसल इल्म हासिल करने की राह दिखाई: {اَفَلَا يَنْظُرُوْنَ اِلَى الْاِبِلِ كَيْفَ خُلِقَتْ} {وَاِلَى السَّمَآءِ كَيْفَ رُفِعَتْ} {وَاِلَى الْجِبَالِ كَيْفَ نُصِبَتْ} {وَاِلَى الْاَرْضِ كَيْفَ سُطِحَتْ} (अल् गाशियह:17-20) "क्या यह लोग देखते नहीं ऊँट की तरफ़ कि कैसे पैदा किया गया है। और आसमान की तरफ़ कि कैसे बुलंद किया गया है। और पहाड़ों की तरफ़ कि कैसे नस्ब किए गये हैं। और ज़मीन की तरफ़ कि कैसे हमवार की गई है!" अल्लामा इक़बाल ने इस फ़िक़्रे क़ुरानी की तर्जुमानी यूँ की है:

खोल आँख, ज़मीन देख, फ़लक देख, फ़िज़ा देख
मशरिक़ से उभरते हुए सूरज को ज़रा देख!

फ़ितरत और मज़ाहिर फ़ितरत के बारे में हम मुसलमानों का अक़ीदा है कि इनके क़वानीन बहुत मज़बूत और मुस्तहकम होने के बावजूद अल्लाह के हुक्म के ताबेअ हैं। अल्लाह जब चाहे फ़ितरत के इन क़वानीन को मौतल (suspend) कर सकता है या बदल सकता है। लेकिन इसके बावजूद असल हक़ीक़त यही है कि इस कायनात का अमूमी निज़ाम बहुत मज़बूत, मोहकम और अटल तबई उसूल व क़वानीन पर चल रहा है और इन क़वानीन को मौतल करने के मौअज़्जात रोज़-रोज़ रूनुमा नहीं होते। समुद्र हज़रत मूसा

अलै. के लिए नौए इंसानी की तारीख़ में एक ही दफ़ा फटा था और आग ने एक ही दफ़ा हज़रत इब्राहीम अलै. को जलाने से इंकार किया था। बहरहाल दुनिया में तबई साइंस (physical science) की मुख़्तलिफ़ टेकनालॉजीज़ का वजूद फ़ितरत के अटल क़वानीन का ही मरहूने मिन्नत है और इसी वजह से आज तरह-तरह की साइंसी तरक्क़ी मुमकिन हुई है। इसी बुनियाद पर क़ुरान इन मज़ाहिर फ़ितरत को अल्लाह तआला की निशानियाँ क़रार देता है और इंसान को दावते फ़िक्र देता है कि वो अल्लाह की इन निशानियों को गौर से देखे, इनके अंदर कारफ़रमाँ क़वानीन का तजज़ियाती मुताअला करके नताइज अख़ज़ करे और फिर इन नतीजों को काम में लाकर अपनी ज़िन्दगी में तरक्क़ी की नई मंज़िलें तलाश करे।

अल्लामा इक़बाल ने इसी हवाले से अपने खुत्बात में फ़रमाया है: The inner core of the western civilization is Quranic" कि मौजूदा मग़रबी तहज़ीब का अंदरूनी महवर (axis) ख़ालिस क़ुरानी है, क्योंकि उसकी बुनियाद साइंस पर है और साइंसी उलूम की तरफ़ इंसान की तवज्जोह क़ुरान ने मब्ज़ूल (आकर्षित) करवाई है। बहरहाल क़ुरान इंसान को हर क़िस्म के तोहमात, रमल, नजूम पामिस्ट्री वग़ैरह से बेज़ार करके अपने मामलात और नज़रियात की बुनियाद ठोस इल्मी हक़ाइक़ पर रखने की हिदायत करता है।

इंसानी ज़िन्दगी के सफ़र में तवाज़ुन रखने के लिए मज़कूरा दोनों क़िस्म के उलूम (इकतसाबी और इल्हामी) अपने-अपने दायरा-ए-अमल में निहायत अहम हैं। दोनों की अहमियत इससे भी वाज़ेह होती है कि हज़रत आदम अलै. की पैदाइश के फ़ौरन बाद आपको इल्मुल अस्माअ (यह वही इल्म है जिसका ताल्लुक़ इंसानी हवास से है और वक़्त के साथ-साथ जिसका दायरा वसीअ होता जा रहा है) से भी नवाज़ दिया गया था और आपको ज़मीन पर भेजते वक़्त इल्हामी इल्म की इत्तेबाअ (following) की हिदायत भी कर दी गई थी: {فَإِمَّا يَأْتِيَنَّكُمْ مِّنِّي هُدًى فَمَن تَبِعَ هُدَايَ فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ} (बक़रह:38) "फिर अगर आये तुम्हारे पास मेरी तरफ़ से कोई हिदायत, तो जिसने पैरवी की मेरी हिदायत की तो उनको ना कोई ख़ौफ़ होगा और ना ही वो ग़मगीन होंगे।"

यूरोपी मआशरा इस सिलसिले में बहुत बड़ी कोताही का मुरतकिब हुआ है कि उस मआशरे में सारी तवज्जोह इकतसाबी इल्म पर मरकूज़ करके इल्हामी इल्म से बिल्कुल ही सर्फ़े नज़र कर लिया गया। गोया अल्लाह तआला ने इंसान को दो आँखें दी थीं, उनमें एक इकतसाबी इल्म की आँख थी और दूसरी इल्हामी इल्म की। यूरोप में एक आँख को मुकम्मल तौर पर बंद करके हर चीज़ को देखने और परखने के लिए दूसरी अकेली आँख पर ही इन्हसार कर लिया गया। नतीजतन ना तो इंसान की सोच में ऐतदाल रहा ना अमल में तवाज़ुन, और यूँ इस पूरे मआशरे ने यक चश्मी दज्जालियत की शक्ल इख़्तियार कर ली।

आयत 37

"और ज़मीन में अकड़ कर ना चलो, ना तो तुम ज़मीन को फाड़ सकोगे और ना ही पहाड़ों की बुलंदी को पहुँच सकोगे।"

وَلَا تَمْشِ فِي الْأَرْضِ مَرَحًا ۖ إِنَّكَ لَن تَخْرِقَ الْأَرْضَ وَلَن تَبْلُغَ الْجِبَالَ طُولًا

٣٧

तुम जिस क़द्र चाहो ताक़तवर हो जाओ, और हमारी ज़मीन पर जितना भी अकड़-अकड़ कर और पाँव मार-मार कर चल लो, तुम अपनी ताक़त से ज़मीन को फाड़ नहीं सकते, और जिस क़द्र चाहो गर्दन अकड़ा लो और तुर्रा व दस्तार से सर बुलंद कर लो, तुम क़द में हमारे पहाड़ों के बराबर तो नहीं हो सकते।

आयत 38

كُلُّ ذٰلِكَ كَانَ سَيِّئُهٗ عِنْدَ رَبِّكَ مَكْرُوْهًا ﴿٣٨﴾

"इन सब बातों की बुराई (का पहलू) तेरे रब को बहुत ना पसंद है।"

यानि यह जितने भी अहकाम हैं इनमें अवामिर (Do's) भी हैं और नवाही (Don'ts)भी। जहाँ किसी काम के करने का हुक्म है वहाँ उसे ना करना बुराई है और जहाँ किसी काम से रोका गया है वहाँ उसमें मुलव्विस होना बुराई है। और नाफ़रमानी और बुराई अल्लाह तआला को हर सूरत में ना पसंद है।

आयत 39

ذٰلِكَ مِمَّآ اَوْحٰۤى اِلَيْكَ رَبُّكَ مِنَ الْحِكْمَةِ ؕ

"यह है जो (ऐ मुहम्मद ﷺ!) आपके रब ने आपकी तरफ़ वही की है हिकमत में से।"

यह अहकाम नौए इंसानी के लिए ख़जाना-ए-हिकमत हैं। इंसानी तहज़ीब व तमद्दुन, सक़ाफ़त और इज्तमाइयत के इन उसूलों पर कारबंद होकर इंसान इसी दुनिया में अपनी इज्तमाई ज़िन्दगी को जन्नत बना सकता है।

وَلَا تَجْعَلْ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ فَتُلْقٰى فِىْ جَهَنَّمَ مَلُوْمًا مَّدْحُوْرًا ﴿٣٩﴾

"और मत ठहराओ अल्लाह के साथ कोई दूसरा मअबूद, वरना तुम झोंक दिये जाओगे जहन्नम में मलामत ज़दा, धुत्कारे हुए।"

यहाँ क़ाबिले गौर नुक्ता यह है कि इन अहकाम में अव्वल व आख़िर तौहीद का हुक्म दिया गया है। आगाज़ में {وَقَضٰى رَبُّكَ اَلَّا تَعْبُدُوْۤا اِلَّاۤ اِيَّاهُ} के अल्फाज़ आये थे, जबकि आख़िर में इसी मज़मून को { وَلَا تَجْعَلْ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ } के अल्फाज़ में फिर दोहराया गया है।

आयत 40

اَفَاَصْفٰىكُمْ رَبُّكُمْ بِالْبَنِيْنَ وَاتَّخَذَ مِنَ الْمَلٰٓئِكَةِ اِنَاثًا ؕ

"तो क्या तुम्हें तो मुन्तख़ब कर लिया है तुम्हारे रब ने बेटों के साथ और अपने लिए बना ली हैं फरिश्तों में से बेटियाँ?"

यह अहले अरब के उस अक़ीदे का जवाब है कि फरिश्ते अल्लाह की बेटियाँ हैं। यह लोग बेटों पर फ़ख्र करते थे और बेटियों को अपने लिए बाइसे आर समझते थे। उनकी इसी सोच की बुनियाद पर उनसे सवाल किया गया है कि जिस चीज़ को अपने लिए आर (शर्म) समझते हो उसे आख़िर किस मन्तिक़ के मुताबिक़ अल्लाह से मन्सूब करते हो?

اِنَّكُمْ لَتَقُوْلُوْنَ قَوْلًا عَظِيْمًا ﴿٤٠﴾

"यह तो तुम बहुत बड़ी (गुस्ताख़ी की) बात कहते हो!"

आयात 41 से 52 तक

وَلَقَدْ صَرَّفْنَا فِىْ هٰذَا الْقُرْاٰنِ لِيَذَّكَّرُوْا ؕ وَمَا يَزِيْدُهُمْ اِلَّا نُفُوْرًا ﴿٤١﴾ قُلْ لَّوْ كَانَ مَعَهٗۤ اٰلِهَةٌ كَمَا يَقُوْلُوْنَ اِذًا لَّابْتَغَوْا اِلٰى ذِى الْعَرْشِ سَبِيْلًا ﴿٤٢﴾ سُبْحٰنَهٗ وَتَعٰلٰى عَمَّا يَقُوْلُوْنَ عُلُوًّا كَبِيْرًا ﴿٤٣﴾ تُسَبِّحُ لَهُ السَّمٰوٰتُ السَّبْعُ وَالْاَرْضُ وَمَنْ فِيْهِنَّ ؕ وَاِنْ مِّنْ شَىْءٍ اِلَّا يُسَبِّحُ بِحَمْدِهٖ وَلٰكِنْ لَّا تَفْقَهُوْنَ تَسْبِيْحَهُمْ ؕ اِنَّهٗ كَانَ حَلِيْمًا غَفُوْرًا ﴿٤٤﴾ وَاِذَا قَرَاْتَ الْقُرْاٰنَ جَعَلْنَا بَيْنَكَ وَبَيْنَ الَّذِيْنَ لَا يُؤْمِنُوْنَ بِالْاٰخِرَةِ حِجَابًا مَّسْتُوْرًا ۙ﴿٤٥﴾ وَّجَعَلْنَا عَلٰى قُلُوْبِهِمْ اَكِنَّةً اَنْ يَّفْقَهُوْهُ وَفِىْۤ اٰذَانِهِمْ وَقْرًا ؕ وَاِذَا ذَكَرْتَ رَبَّكَ فِى الْقُرْاٰنِ وَحْدَهٗ وَلَّوْا عَلٰۤى اَدْبَارِهِمْ نُفُوْرًا ﴿٤٦﴾ نَحْنُ اَعْلَمُ بِمَا يَسْتَمِعُوْنَ بِهٖۤ اِذْ يَسْتَمِعُوْنَ اِلَيْكَ وَاِذْ هُمْ نَجْوٰۤى اِذْ يَقُوْلُ الظّٰلِمُوْنَ اِنْ تَتَّبِعُوْنَ

إِلَّا رَجُلًا مَّسْحُوْرًا ﴿٤٧﴾ اُنْظُرْ كَيْفَ ضَرَبُوْا لَكَ الْاَمْثَالَ فَضَلُّوْا فَلَا يَسْتَطِيْعُوْنَ
سَبِيْلًا ﴿٤٨﴾ وَقَالُوْٓا ءَاِذَا كُنَّا عِظَامًا وَّرُفَاتًا ءَاِنَّا لَمَبْعُوْثُوْنَ خَلْقًا جَدِيْدًا ﴿٤٩﴾ قُلْ
كُوْنُوْا حِجَارَةً اَوْ حَدِيْدًا ﴿٥٠﴾ اَوْ خَلْقًا مِّمَّا يَكْبُرُ فِيْ صُدُوْرِكُمْ ۚ فَسَيَقُوْلُوْنَ مَنْ
يُّعِيْدُنَا ۭ قُلِ الَّذِيْ فَطَرَكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ ۚ فَسَيُنْغِضُوْنَ اِلَيْكَ رُءُوْسَهُمْ وَيَقُوْلُوْنَ
مَتٰى هُوَ ۭ قُلْ عَسٰٓى اَنْ يَّكُوْنَ قَرِيْبًا ﴿٥١﴾ يَوْمَ يَدْعُوْكُمْ فَتَسْتَجِيْبُوْنَ بِحَمْدِهٖ
وَتَظُنُّوْنَ اِنْ لَّبِثْتُمْ اِلَّا قَلِيْلًا ﴿٥٢﴾

आयत 41

وَلَقَدْ صَرَّفْنَا فِيْ هٰذَا الْقُرْاٰنِ لِيَذَّكَّرُوْا ۭ

"और हमने फेर-फेर कर बयान किया है इस क़ुरान में (अपनी आयात को) ताकि यह सबक़ हासिल करें।"

इनकी नसीहत के लिए हमने क़ुरान में असलूब बदल-बदल कर हक़ को वाज़ेह किया है। इस सूरह मुबारक के बारे में एक ख़ास बात यह है कि इसमें क़ुरान का लफ्ज़ और ज़िक्र बार-बार आया है। गोया इस सूरत के मज़ामीन का ताना-बाना क़ुरान से मुताल्लिक़ है। इससे पहले आयत 9 में फ़रमाया गया: {اِنَّ هٰذَا الْقُرْاٰنَ يَهْدِيْ لِلَّتِيْ هِيَ اَقْوَمُ} आयत ज़ेरे नज़र में भी क़ुरान का ज़िक्र है और यह ज़िक्र इस अंदाज़ में आइंदा आयात में भी बार-बार आयेगा।

وَمَا يَزِيْدُهُمْ اِلَّا نُفُوْرًا ﴿٤١﴾

"मगर यह नहीं बढ़ाता इन्हें मगर नफ़रत ही में।"

यह उन लोगो की बदबख़्ती है कि क़ुरान में गोना-गों असलूबों में हक़ वाज़ेह हो जाने के बावजूद उनकी बेज़ारी और नफ़रत ही में इज़ाफ़ा हो रहा है और वो हक़ से और ज़्यादा दूर भागे जा रहें हैं।

आयत 42

قُلْ لَّوْ كَانَ مَعَهٗٓ اٰلِهَةٌ كَمَا يَقُوْلُوْنَ اِذًا لَّابْتَغَوْا اِلٰى ذِي الْعَرْشِ سَبِيْلًا ﴿٤٢﴾

"आप ﷺ कहिए कि अगर उसके साथ कुछ दूसरे मअबूद भी होते, जैसा कि ये कहते हैं, तब तो वो ज़रूर तलाश करते साहिबे अर्श की तरफ़ कोई रास्ता।"

अगर वाक़ई अल्लाह के साथ-साथ दूसरे मअबूदों का भी कोई वजूद होता तो वो ज़रूर सरकशी और बग़ावत करते हुए उसके मुक़ाबले में आने की कोशिश करते। जिस तरह छोटे-छोटे राजाओं की फ़ितरी ख़्वाहिश होती है कि वो किसी ना किसी तरह कोशिश करके महाराजा की कुर्सी तक पहुँच जायें, और अपनी इस ख़्वाहिश की तक्मील के लिए वो बग़ावत तक का ख़तरा मोल ले लेते हैं, इसी तरह अगर अल्लाह के भी शरीक होते तो वो भी अल्लाह के मुक़ाबले में ज़रूर मुहिम जोई करते और अगर ऐसा होता तो इस कायनात का सारा निज़ाम दरहम-बरहम होकर रह जाता।

आयत 43

سُبْحٰنَهٗ وَتَعٰلٰى عَمَّا يَقُوْلُوْنَ عُلُوًّا كَبِيْرًا ﴿٤٣﴾

"वो पाक है और बहुत ही बुलंद व बरतर है उन बातों से जो ये कह रहे हैं।"

आयत 44

تُسَبِّحُ لَهُ السَّمٰوٰتُ السَّبۡعُ وَالۡاَرۡضُ وَمَنۡ فِيۡهِنَّ‌ؕ

"उसकी तस्बीह में लगे हुए हैं सातों आसमान और ज़मीन और (वो तमाम मख़्लूक़ भी) जो उनमें है।"

इस कायनात की एक-एक चीज़, चाहे जानदार हो या बज़ाहिर बेजान, वो अल्लाह की तस्बीह करती है। तस्बीह की एक सूरत तो यह है कि कायनात की हर चीज़ अपने वजूद से गोया अपने ख़ालिक़ की खल्लाक़ी और अपने सानेअ (बनाने वाले) की सन्नाई का ऐलान कर रही है। जैसे एक तस्वीर अपने मुसव्विर के मैयार-ए-फ़न का इज़हार करती है, लेकिन तमाम मख़्लूक़ात का एक तर्ज़ तस्बीह क़ौली भी है। अल्लाह तआला ने हर चीज़ को ज़बान अता कर रखी है और वो अपनी ज़बान ख़ास से अल्लाह की तस्बीह में मसरूफ़ है।

وَاِنۡ مِّنۡ شَىۡءٍ اِلَّا يُسَبِّحُ بِحَمۡدِهٖ وَلٰكِنۡ لَّا تَفۡقَهُوۡنَ تَسۡبِيۡحَهُمۡ‌ؕ

"और कोई चीज़ नहीं मगर यह कि वो तस्बीह करती है उसकी हम्द के साथ, लेकिन तुम नहीं समझ सकते उनकी तस्बीह को।"

اِنَّهٗ كَانَ حَلِيۡمًا غَفُوۡرًا ﴿۴۴﴾

"यक़ीनन वो बहुत तहम्मुल वाला, बहुत बख़्शने वाला है।"

हर चीज़ का यही अंदाज़े तस्बीह है जिसका इदराक इंसान नहीं कर सकते। सूरह हामीम सज्दा की आयत 21 में अल्लाह की इस क़ुदरत का ज़िक्र है कि उसने हर चीज़ को क़ुव्वते नात्क़ा (भाषा) अता की है। रोज़े महशर जब इंसानों के अपने अज़ाअ उनके ख़िलाफ़ शहादत देंगे तो वो हैरान होकर अपनी खालों से पूछेंगे कि यह सब क्या है? {قَالُوۡۤا اَنۡطَقَنَا اللّٰهُ الَّذِىۡۤ اَنۡطَقَ كُلَّ شَىۡءٍ} "उनके चमड़े जवाब में कहेंगे कि हमें उस अल्लाह ने क़ुव्वते गोयाई अता की है जिसने हर चीज़ को बोलना सिखाया है।"

आयत 45

وَاِذَا قَرَاۡتَ الۡقُرۡاٰنَ جَعَلۡنَا بَيۡنَكَ وَبَيۡنَ الَّذِيۡنَ لَا يُؤۡمِنُوۡنَ بِالۡاٰخِرَةِ حِجَابًا مَّسۡتُوۡرًا ۙ﴿۴۵﴾

"और जब आप ﷺ क़ुरान पढ़ते हैं तो हम आपके और उन लोगों के दरमियान जो आख़िरत पर ईमान नहीं रखते, एक मख़्फ़ी पर्दा हाइल कर देते हैं।"

इस आयत में एक दफ़ा फिर क़ुरान का ज़िक्र आया है। यहाँ एक ग़ैर मरई परदे का ज़िक्र है जो मुन्करीने आख़िरत और हिदायत के दरमियान हाइल हो जाता है। इसलिए कि ऐसे लोगों के हर अमल का मैयार व मक़सूद सिर्फ़ और सिर्फ़ दुनिया की ज़िन्दगी है। वो ना तो आख़िरत की ज़िन्दगी के क़ायल हैं और ना ही वहाँ के अज्रो सवाब के बारे में संजीदा। दुनिया में वो "बाबर बा ऐश कोश कि आलम दोबारा नीस्त" के नज़रिये पर ज़िन्दगी बसर कर रहे हैं और क़ुरान को या हिदायत की किसी भी बात को तवज्जोह से नहीं सुनते। ऐसे लोगों को उनके इसी रवैय्ये की बिना पर हिदायत से मुस्तक़लन महरूम कर दिया जाता है। और चूँकि यह अल्लाह का क़ानून है इसलिए आयत ज़ेरे नज़र में अल्लाह तआला ने इसे अपनी तरफ़ मन्सूब किया है कि जब आप ﷺ उन्हें क़ुरान पढ़ कर सुनाते हैं तो उनके ग़ैर-संजीदा रवैय्ये की बिना पर हम आप ﷺ के और उनके दरमियान एक ग़ैर मरई पर्दा हाइल कर देते हैं।

आयत 46

وَّجَعَلۡنَا عَلٰى قُلُوۡبِهِمۡ اَكِنَّةً اَنۡ يَّفۡقَهُوۡهُ وَفِىۡۤ اٰذَانِهِمۡ وَقۡرًا‌ؕ

"और उनके दिलों पर भी हम पर्दे डाल देते हैं कि वो इसे समझ ना सकें, और उनके कानों में सक़ल (पैदा कर देते हैं)।"

وَاِذَا ذَكَرۡتَ رَبَّكَ فِى الۡقُرۡاٰنِ وَحۡدَهٗ وَلَّوۡا عَلٰٓى اَدۡبَارِهِمۡ نُفُوۡرًا ۝۴۶

"और जब आप ﷺ क़ुरान में तन्हा अपने रब ही का ज़िक्र करते हैं तो यह अपनी पीठें मोड़ कर चल देते हैं नफ़रत के साथ।"

यह लोग अपने तअस्सुब की वजह से अकेले अल्लाह का ज़िक्र बतौर मअबूद बर्दाश्त ही नहीं कर सकते। वो चाहते हैं कि अल्लाह के साथ-साथ उनके मअबूदों का भी कभी कभार ज़िक्र हुआ करे और ऐसा ना होने की सूरत में वो अकेले अल्लाह का ज़िक्र सुनने को तैयार नहीं हैं। चुनाँचे वो बिदक कर नफ़रत के साथ पीठ मोड़ कर चले जाते हैं।

आयत 47

نَحۡنُ اَعۡلَمُ بِمَا يَسۡتَمِعُوۡنَ بِهٖٓ اِذۡ يَسۡتَمِعُوۡنَ اِلَيۡكَ

"हम ख़ूब जानते हैं जिस गर्ज़ से वो तवज्जोह से सुनते हैं इस (क़ुरान) को जब वो कान लगाए बैठे होते हैं आप ﷺ की तरफ़"

क़ुरैशे मक्का की इस चाल का ज़िक्र पहले भी हो चुका है। उनके बाज़ बड़े सरदार अपने अवाम को धोखा देने के लिए रसूल अल्लाह ﷺ की मजलिस में आते और बज़ाहिर बड़े इन्हाक से सब कुछ सुनते। फिर वापस जाकर कहते कि लो जी हम तो बड़े ख़ुलूस और इश्तयाक़ के साथ गये थे मुहम्मद (ﷺ) की महफ़िल में कि वो जो कलाम पेश करते हैं उसको सुनें और समझें, मगर अफ़सोस कि हमें तो वहाँ से कुछ भी हासिल नहीं हुआ। इस तरह वो कोशिश करते कि उनके अवाम भी उनके हमनवा बन जायें और उनमें भी यह सोच आम हो जाये कि यह बड़े-बड़े सरदार आखिर समझदार हैं, बात की तह तक पहुँचने की सलाहियत रखते हैं, मुहम्मद (ﷺ) की बात सुनने और समझने के लिए मुख्लिस भी हैं और इसी इख़्लास में वो ख़ुसूसी तौर पर आप (ﷺ) की मजलिस में भी जाते हैं। अगर इस नए कलाम में कोई ख़ास बात होती तो वो ज़रूर इनकी समझ में आ जाती। अब जब ये लोग वहाँ जाकर और उस कलाम को सुन कर कह रहे हैं कि उसमें कुछ भी ख़ास बात नहीं है तो यक़ीनन ये लोग सच ही कह रहे हैं।

وَاِذۡ هُمۡ نَجۡوٰٓى اِذۡ يَقُوۡلُ الظّٰلِمُوۡنَ اِنۡ تَتَّبِعُوۡنَ اِلَّا رَجُلًا مَّسۡحُوۡرًا ۝۴۷

"और जब वो अलैहदगी में सरगोशियाँ करते हैं, जब यह ज़ालिम (एक दूसरे से) कह रहे होते हैं कि तुम नहीं पैरवी कर रहे हो मगर एक सहरज़दा शख़्स की।"

उनमें से किसी के दिल पर जब क़ुरान की कोई आयत असर करती है और वो उसका इज़हार अपने साथियों के साथ करता है कि हाँ भई मुहम्मद (ﷺ) ने आज जो फलाँ बात की है उसमें बहुत वज़न है, इस पर हमें संजीदगी से ग़ौर करना चाहिए तो ऐसी सूरत में वो फ़ौरन उसका तोड़ करने के लिए अपने उस साथी को समझाना शुरु कर देते हैं कि जी छोड़ो! तुम कहाँ एक सहरज़दा आदमी के पीछे चल पड़े। उन (ﷺ) की बातों पर कोई संजीदा तवज्जोह देने की ज़रुरत नहीं।

आयत 48

اُنۡظُرۡ كَيۡفَ ضَرَبُوۡا لَكَ الۡاَمۡثَالَ

"देखिए कैसे बयान करते हैं ये लोग आप ﷺ के लिए मिसालें"

कभी वो आपको सहरज़दा आदमी कहते हैं, कभी काहिन और कभी शायर! देखें कैसी-कैसी बेहूदा बातें करते हैं और उसमें भी किसी एक राय पर इत्तेफ़ाक़ नहीं कर सकते।

فَضَلُّوۡا فَلَا يَسۡتَطِيۡعُوۡنَ سَبِيۡلًا ۝۴۸

"चुनाँचे वो भटक गये हैं और अब राहयाब नहीं हो सकेंगे।"

आयत 49

"और वो कहते हैं कि क्या जब हम हो जायेंगे हड्डियाँ और चूरा-चूरा, तो क्या हम उठाये जायेंगे एक नई तख़्लीक़ में?"

وَقَالُوْٓا ءَاِذَا كُنَّا عِظَامًا وَّرُفَاتًا ءَاِنَّا لَمَبْعُوْثُوْنَ خَلْقًا جَدِيْدًا ﴿٤٩﴾

यह लोग आप से बड़ी हैरत से सवाल करते हैं कि आप (ﷺ) जो इंसानों की दोबारा ज़िन्दगी की बात करते हैं यह कैसे मुम्किन है? जब हमारी हड्डियाँ रेज़ा-रेज़ा हो जायेंगी और गोश्त गल-सड़ जायेगा, तो उसके बाद हमें फिर से नई ज़िन्दगी कैसे मिल सकती है? गोया उनकी सोच के मुताबिक़ ऐसा होना बिल्कुल महाल और नामुम्किन है।

आयत 50

"(उनसे) कहिए कि ख़्वाह तुम पत्थर बन जाओ या लोहा।"

قُلْ كُوْنُوْا حِجَارَةً اَوْ حَدِيْدًا ﴿٥٠﴾

आयत 51

"या ऐसी मख़्लूक़ (बन जाओ) जो तुम्हारे दिलों में इनसे भी सख़्त हो।"

اَوْ خَلْقًا مِّمَّا يَكْبُرُ فِيْ صُدُوْرِكُمْ ۚ

ऐ नबी ﷺ इनसे कहिए कि आप तो हड्डियों की बात करते हो और अपने जिस्मों के रेज़ा-रेज़ा होकर ख़त्म हो जाने का तसव्वुर लिए बैठे हो। तुम अगर पत्थर और लोहा भी बन जाओ या अपनी सोच के मुताबिक़ इससे भी बढ़ कर किसी अजीब मख़्लूक़ का रूप धार लो, तब भी तुम्हें अज़ सरे नौ उठा लिया जायेगा।

"फिर कहेंगे कि कौन हमें दोबारा लौटायेगा?"

فَسَيَقُوْلُوْنَ مَنْ يُّعِيْدُنَا ۭ

"आप ﷺ कहिए कि वही जिसने पहली मर्तबा तुम्हें पैदा किया था।"

قُلِ الَّذِيْ فَطَرَكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ ۭ

"फिर वो आपके सामने अपने सरों को मटकायेंगे और कहेंगे कि यह कब होगा?"

فَسَيُنْغِضُوْنَ اِلَيْكَ رُءُوْسَهُمْ وَيَقُوْلُوْنَ مَتٰى هُوَ ۭ

लाजवाब होकर अपने सरों को मटकाते हुए बोलेंगे कि चलो मान लिया कि यह सब कुछ मुम्किन है, मगर यह तो बताइये कि ऐसा होगा कब?

"आप ﷺ कहिए कि हो सकता है (इसका वक़्त) क़रीब ही हो।"

قُلْ عَسٰٓى اَنْ يَّكُوْنَ قَرِيْبًا ﴿٥١﴾

अजब नहीं कि तुम्हारी शामत की वो घड़ी आया ही चाहती हो, ज़्यादा दूर ना हो।

आयत 52

"जिस दिन वो तुम्हें पुकारेगा तो तुम (उसकी पुकार पर) लब्बैक कहोगे उसकी हम्द करते हुए"

يَوْمَ يَدْعُوْكُمْ فَتَسْتَجِيْبُوْنَ بِحَمْدِهٖ

जब वो घड़ी आयेगी और तुम्हारा ख़ालिक़ तुम्हें क़ब्रों से बाहर आने के लिए बुलायेगा तो तुम्हारी हड्डियाँ और तुम्हारे जिस्मों के बिखरे ज़र्रात सब

सिमट कर फिर से ज़िन्दा इंसानों का रूप धार लेंगे और तुम उसकी हम्द करते हुए उसकी पुकार की तामील में भागे चले जा रहे होगे।

وَتَظُنُّوْنَ اِنْ لَّبِثْتُمْ اِلَّا قَلِيْلًا ۝٥٢

"और तुम गुमान करोगे कि तुम नहीं रहे मगर बहुत थोड़ा (अरसा)।"

उस वक़्त तुम्हें दुनिया और आलमे बरज़ख़ (क़ब्र) में अपना बीता हुआ ज़माना ऐसे लगेगा जैसे कि चंद घड़ियाँ ही तुम वहाँ गुज़ार कर आये हो।

आयात 53 से 60 तक

وَقُلْ لِّعِبَادِيْ يَقُوْلُوا الَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ ۭ اِنَّ الشَّيْطٰنَ يَنْزَغُ بَيْنَهُمْ ۭ اِنَّ الشَّيْطٰنَ كَانَ لِلْاِنْسَانِ عَدُوًّا مُّبِيْنًا ۝٥٣ رَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِكُمْ ۭ اِنْ يَّشَاْ يَرْحَمْكُمْ اَوْ اِنْ يَّشَاْ يُعَذِّبْكُمْ ۭ وَمَآ اَرْسَلْنٰكَ عَلَيْهِمْ وَكِيْلًا ۝٥٤ وَرَبُّكَ اَعْلَمُ بِمَنْ فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۭ وَلَقَدْ فَضَّلْنَا بَعْضَ النَّبِيّٖنَ عَلٰي بَعْضٍ وَّاٰتَيْنَا دَاوٗدَ زَبُوْرًا ۝٥٥ قُلِ ادْعُوا الَّذِيْنَ زَعَمْتُمْ مِّنْ دُوْنِهٖ فَلَا يَمْلِكُوْنَ كَشْفَ الضُّرِّ عَنْكُمْ وَلَا تَحْوِيْلًا ۝٥٦ اُولٰۗىِٕكَ الَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ يَبْتَغُوْنَ اِلٰى رَبِّهِمُ الْوَسِيْلَةَ اَيُّهُمْ اَقْرَبُ وَيَرْجُوْنَ رَحْمَتَهٗ وَيَخَافُوْنَ عَذَابَهٗ ۭ اِنَّ عَذَابَ رَبِّكَ كَانَ مَحْذُوْرًا ۝٥٧ وَاِنْ مِّنْ قَرْيَةٍ اِلَّا نَحْنُ مُهْلِكُوْهَا قَبْلَ يَوْمِ الْقِيٰمَةِ اَوْ مُعَذِّبُوْهَا عَذَابًا شَدِيْدًا ۭ كَانَ ذٰلِكَ فِي الْكِتٰبِ مَسْطُوْرًا ۝٥٨ وَمَا مَنَعَنَآ اَنْ نُّرْسِلَ بِالْاٰيٰتِ اِلَّآ اَنْ كَذَّبَ بِهَا الْاَوَّلُوْنَ ۭ وَاٰتَيْنَا ثَمُوْدَ النَّاقَةَ مُبْصِرَةً فَظَلَمُوْا بِهَا ۭ وَمَا نُرْسِلُ بِالْاٰيٰتِ اِلَّا تَخْوِيْفًا ۝٥٩ وَاِذْ قُلْنَا لَكَ اِنَّ رَبَّكَ اَحَاطَ بِالنَّاسِ ۭ وَمَا جَعَلْنَا الرُّءْيَا الَّتِيْٓ اَرَيْنٰكَ اِلَّا فِتْنَةً لِّلنَّاسِ وَالشَّجَرَةَ الْمَلْعُوْنَةَ فِي الْقُرْاٰنِ ۭ وَنُخَوِّفُهُمْ ۙ فَمَا يَزِيْدُهُمْ اِلَّا طُغْيَانًا كَبِيْرًا ۝٦٠

आयत 53

وَقُلْ لِّعِبَادِيْ يَقُوْلُوا الَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ ۭ

"और आप मेरे बंदों से कह दीजिए कि वही बात कहें जो बहुत अच्छी हो।"

यहाँ वो नुक़्ता ज़हन में ताज़ा कर लीजिए जिसके क़ब्ल अज़े वज़ाहत हो चुकी है कि मक्की सूरतों में अहले ईमान को बराहेरास्त मुख़ातिब नहीं किया गया। उनसे बराहेरास्त तख़ातब का सिलसिला {या अय्युहल्लाज़ीना आमनु} तहवीले क़िब्ला के बाद शुरु हुआ, जब उन्हें बाक़ायदा उम्मते मुस्लिमा के मन्सब पर फ़ायज़ कर दिया गया। उससे पहले अहले ईमान को रसूल अल्लाह ﷺ की वसातत से ही मुख़ातिब किया जाता रहा। चुनाँचे इसी उसूल के तहत यहाँ भी हुज़ूर ﷺ से फ़रमाया जा रहा है कि आप मेरे बंदों (मोमिनीन) को मेरी तरफ़ से यह बता दें कि वो हर हाल में ख़ुश अख्लाक़ी का मुज़ाहरा करें और गुफ़्तगू में भी तरशी और तल्खी ना आने दें। इस तरह आपस में भी शीर व शक्कर बन कर रहें और मुख़ालफ़ीन के सामने भी बेहतर अख्लाक़ का नमूना पेश करें। अक़ामते दीन के इस मिशन को आगे बढ़ाने के लिए मोमिनीन के सामने बहुत ज़्यादा रुकावटें हैं। उनके मुख़ातबीन जहालत की दलदल में फंसे हुए हैं। उनके जाहिलाना ऐतक़ादात नस्लों से चले आ रहें हैं। इसी तरह उन्हें अपने रस्मों रिवाज, सियासी व मआशी मफ़ादात और ग़ैरत व हमीयत के जज़्बात बहुत अज़ीज़ हैं। उन्हें इस सब कुछ का दिफ़ा करना हैं और इसके लिए वो हर तरह की क़ुर्बानियाँ देने को तैयार हैं। इन हालात में दाईयाने हक़ व तहम्मुल, बुर्दबारी और बर्दाश्त का मुज़ाहिरा करना चाहिए। ऐसा ना हो कि वो इश्तआल में आकर (उत्तेजित होकर) आला अख्लाक़ का दामन हाथ से छोड़ बैठें।

اِنَّ الشَّيْطٰنَ يَنْزَغُ بَيْنَهُمْ ۭ اِنَّ الشَّيْطٰنَ كَانَ لِلْاِنْسَانِ عَدُوًّا مُّبِيْنًا ۝٥٣

"यक़ीनन शैतान उनके दरमियान झगड़ा डालेगा। यक़ीनन शैतान इंसान का खुला दुश्मन है।"

आयत 54

"तुम्हारा रब तुमसे ख़ूब वाक़िफ़ है। अगर वो चाहेगा तो तुम पर रहम फ़रमायेगा, या अगर चाहेगा तो तुम्हें अज़ाब देगा।"

رَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِكُمْ ؕ اِنْ يَّشَاْ يَرْحَمْكُمْ اَوْ اِنْ يَّشَاْ يُعَذِّبْكُمْ ؕ

"और (ऐ नबी ﷺ) हमने आपको उन पर दरोगा बना कर नहीं भेजा।"

وَمَاۤ اَرْسَلْنٰكَ عَلَيْهِمْ وَكِيْلًا ۝

हिदायत को क़ुबूल करना या ना करना हर शख़्स का ज़ाती मामला और ज़ाती इन्तख़ाब है। आप ﷺ उन तक पैग़ाम पहुँचाने के ज़िम्मेदार हैं, उन्हें हिदायत पर लाने के मुकल्लफ़ नहीं।

आयत 55

"और आपका रब ख़ूब जानता है उसको जो कोई है आसमानों और ज़मीन में।"

وَرَبُّكَ اَعْلَمُ بِمَنْ فِى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ

"और हमने बाज़ अम्बिया को बाज़ पर फ़ज़ीलत बख़्शी है"

وَلَقَدْ فَضَّلْنَا بَعْضَ النَّبِيّٖنَ عَلٰى بَعْضٍ

यहाँ इस फिक्रे के सयाक़ व सबाक़ को अच्छी तरह समझने की ज़रुरत है। सूरह बनी इस्राईल मक्की दौर के आखरी बरसों में नाज़िल हुई और उसका आग़ाज़ भी बनी इस्राईल की तारीख़ से हुआ। इस सूरह के नुज़ूल से पहले नबी अखिरुज्ज़मान ﷺ की बेअसत और क़ुरान के बारे में तमाम ख़बरें मदीना पहुँच चुकी थीं और यहूदे मदीना एक-एक बात और एक-एक ख़बर का बारीक बीनी से जायज़ा ले रहे थे। फिर अनक़रीब हुज़ूर ﷺ ख़ुद भी मदीना तशरीफ़ लाने वाले थे। इन हालात में जब मुसलमानों का यहूदियों के साथ अक़ाइद व नज़रियात के बारे में तबादला ख़्यालात होना था तो अम्बिया किराम के फ़ज़ाइल के बारे में सवालात का उठना नागुज़ीर था, कि अगर मुहम्मद (ﷺ) नबी हैं तो आप ﷺ और मूसा अलै. में से अफ़ज़ल कौन हैं? या यह मसला कि मुहम्मद ﷺ अफ़ज़ल हैं या ईसा अलै.? चुनाँचे इस हवाले से यहाँ एक बुनियादी और उसूली बात बयान फ़रमा दी गई कि अल्लाह तआला ज़मीन व आसमान में मौजूद अपनी तमाम मख़्लूक़ के अहवाल व कैफ़ियात से ख़ूब वाक़िफ़ हैं और उसने अपने बाज़ अम्बिया को बाज़ पर फ़ज़ीलत दी है। सूरतुल बक़रह की आयत 253 में यही बात यूँ बयान फ़रमाई गई है: {تِلْكَ الرُّسُلُ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلٰي بَعْضٍ} "यह रसूल हैं इनमें से हमने बाज़ को बाज़ पर फ़ज़ीलत दी है।" ऐसा ना हो कि इस बहस में पड़ कर आप लोग अपने नबी ﷺ की फ़ज़ीलत इस तरह बयान करें कि मुख़ालफ़ीन के मन्फ़ी जज़्बात को हवा मिले और वो तअस्सुब से मग़लूब होकर आपकी बात ही सुनने से इंकार कर दें।

यह बहुत नाज़ुक मसला है और इसकी नज़ाकत को समझने की ज़रुरत है। हम मुसलमानों का अक़ीदा है कि हमारे नबी ﷺ तमाम अम्बिया किराम से अफ़ज़ल हैं और इसमें कोई शक नहीं कि आप ﷺ सबसे अफ़ज़ल हैं, मगर मौक़ा व महल देखे बग़ैर अपने इस अक़ीदे का इस तरह से चर्चा करना दुरुस्त नहीं कि इससे दूसरे मुश्तइल (उग्र) हों और उनके मुख़ालफ़ाना जज़्बात व ख़्यालात को इन्गाख़ैत मिले। इस ज़िमन में हुज़ूर ﷺ की वाज़ेह हदीस है कि ((لَا تُفَضِّلُوْا بَيْنَ اَنْبِيَاءِ اللهِ))[20] "अल्लाह के नबियों के माबैन दर्जाबंदी ना किया करो।" आपने मज़ीद फ़रमाया: ((لَا يَنْبَغِيْ لِعَبْدٍ اَنْ يَقُوْلَ اَنَا خَيْرٌ مِنْ يُوْنُسَ بْنِ مَتّٰى))[21] "किसी शख़्स के लिए रवा नहीं है कि वो यूँ कहे कि मैं (मुहम्मद ﷺ) युनुस बिन मत्ता से अफ़ज़ल हूँ।" आप ﷺ ने यहाँ हज़रत युनुस का ज़िक्र शायद इसलिये फ़रमाया कि हज़रत युनुस अलै. वाहिद नबी हैं जिनकी अल्लाह तआला के यहाँ कुछ गिरफ्त हुई है। बहरहाल आप

ﷺ ने वाज़ेह तौर पर इससे मना फ़रमाया है कि दूसरे अम्बिया पर आप ﷺ की फ़ज़ीलत का प्रचार किया जाये।

"और हमने दाऊद को ज़बूर अता की थी।"

وَّاٰتَيۡنَا دَاوٗدَ زَبُوۡرًا ۝۵۵

इस सयाक़ व सबाक़ की मुनास्बत से यहाँ बनी इस्राईल के एक नबी का तज़किरा फ़रमा दिया और आपकी फ़ज़ीलत भी बयान फ़रमा दी कि हज़रत दाऊद अलै. को हमने ज़बूर जैसी जलीलुल क़द्र किताब अता फ़रमाई थी। यहाँ पर यह इशारा मिलता है कि मौक़ा व महल के मुताबिक़ अल्लाह तआला अपने अम्बिया व रुसुल के फ़ज़ाइल और आला मरातिब के ज़िक्र से उनकी इज्ज़त अफ़ज़ाई करता है।

आयत 56

"आप कहिए कि उनको पुकार देखो जिनको तुमने उसके सिवा (मअबूद) गुमान कर रखा है, तो ना उन्हें कुछ इख़्तियार हासिल है तुमसे कोई तकलीफ़ दूर करने का और ना ही (तुम्हारी हालत) बदलने का।"

قُلِ ادۡعُوا الَّذِيۡنَ زَعَمۡتُمۡ مِّنۡ دُوۡنِهٖ فَلَا يَمۡلِكُوۡنَ كَشۡفَ الضُّرِّ عَنۡكُمۡ وَلَا تَحۡوِيۡلًا ۝۵۶

आयत 57

"वो लोग जिन्हें ये पुकारते हैं वो तो ख़ुद अपने रब के क़ुर्ब के मुतलाशी हैं कि उनमें से कौन (उसके) ज़्यादा क़रीब है"

اُولٰٓئِكَ الَّذِيۡنَ يَدۡعُوۡنَ يَبۡتَغُوۡنَ اِلٰى رَبِّهِمُ الۡوَسِيۡلَةَ اَيُّهُمۡ اَقۡرَبُ

लफ़्ज “वसीला” बमायने क़ुर्ब इससे पहले हम सूरतुल मायदा (आयत 35) में पढ़ चुके हैं। मुराद यह है कि जिस तरह इस दुनिया में अल्लाह के बंदे अल्लाह के यहाँ अपने दर्जात बढ़ाने की फ़िक्र में रहते हैं उसी तरह आलमे ग़ैब या आलमे अम्र मे भी तक़र्रुब इलल्लाह की यह दर्जाबंदी मौजूद है। जैसे फ़रिश्तों में तबक़ा-ए-असफ़ल के फरिश्ते, फिर दर्जा-ए-आला के फ़रिश्ते और फिर मलाइका-ए-मुक़र्रबीन हैं।

अल्लाह की शरीक ठहराई जाने वाली शख़्सियात में से कुछ तो ऐसी हैं जो बिल्कुल ख़्याली हैं और दरहक़ीक़त में उनका कोई वुजूद नहीं। लेकिन उनके अलावा हर ज़माने में लोग अम्बिया, औलिया अल्लाह और फ़रिश्तों को भी अल्लाह तआला के इख़्तियारात में शरीक समझते रहे हैं। ऐसी ही शख़्सियात के बारे में यहाँ फ़रमाया जा रहा है कि वो चाहे अम्बिया व रुसुल हों, या औलिया अल्लाह, या फ़रिश्ते, वो तो आलमे अम्र में ख़ुद अल्लाह की रज़ाजोई के लिए कोशाँ और उसके क़ुर्ब के मुतलाशी हैं। इसके अलावा क़ुरान हकीम में मुतअद्दिद बार ज़िक्र हुआ है कि ऐसी तमाम शख़्सियात जिन्हें दुनिया में मुख्तलिफ़ अंदाज़ में अल्लाह के सिवा पुकारा जाता था क़यामत के दिन अपने अक़ीदतमंदो के मुशरिकाना नज़रियात से इज़हारे बेज़ारी करेंगी और साफ़ कह देंगी कि अगर यह लोग हमारे पीछे हमें अल्लाह शरीक ठहराते रहे थे तो हमें इस बारे कुछ ख़बर नहीं।

"और वो उम्मीदवार हैं उसकी रहमत के और डरते रहते हैं उसके अज़ाब से। वाक़िअतन आप ﷺ के रब का अज़ाब चीज़ ही डरने की है।"

وَيَرۡجُوۡنَ رَحۡمَتَهٗ وَيَخَافُوۡنَ عَذَابَهٗ ؕ اِنَّ عَذَابَ رَبِّكَ كَانَ مَحۡذُوۡرًا ۝۵۷

आयत 58

وَمَا مَنَعَنَآ اَنۡ نُّرۡسِلَ بِالۡاٰيٰتِ اِلَّاۤ اَنۡ كَذَّبَ بِهَا الۡاَوَّلُوۡنَ‌ؕ

"और हमें नहीं रोका (किसी और बात ने) कि हम निशानियाँ भेजें, सिवाय इसके कि उनको झुठला दिया था पहले लोगों ने।"

अल्लाह तआला ने हिस्सी मौअज्ज़ात दिखाने सिर्फ़ इसलिए बंद कर दिये हैं कि साबक़ा क़ौमों के लोग ऐसे मौअज्ज़ात को देख कर भी कुफ़्र पर डटे रहे और ईमान ना लाये। यह यही मज़मून है जो सूरतुल अन्आम और उसके बाद नाज़िल होने वाली मक्की सूरतों में तसलसुल से दोहराया जा रहा है।

وَاٰتَيۡنَا ثَمُوۡدَ النَّاقَةَ مُبۡصِرَةً فَظَلَمُوۡا بِهَا‌ؕ

"और हमने क़ौमे समूद को ऊँटनी दी आँखें खोल देने वाली निशानी (के तौर पर) तो उन्होंने उसके साथ भी ज़ुल्म किया।"

क़ौमे समूद को उनके मुतालबे पर ऊँटनी का बसीरत अफ़रोज़ मौअज्ज़ा दिखाया गया मगर उन्होंने इस वाज़ेह मौअज्ज़े को देख लेने के बाद भी हज़रत सालेह अलै. पर ईमान लाने के बजाय उस ऊँटनी ही को मार डाला। इसी तरह हज़रत ईसा अलै. को मिट्टी से ज़िन्दा परिंदे बनाने और "कुम बिइज़्निल्लाह" कह कर मुर्दों को ज़िन्दा करने तक के मौअज्ज़ात दिये गये, मगर क्या उन्हें देख कर वो लोग ईमान ले आये?

وَمَا نُرۡسِلُ بِالۡاٰيٰتِ اِلَّا تَخۡوِيۡفًا ۝۵۹

"और हम नहीं भेजते निशानियाँ मगर सिर्फ़ डराने के लिए।"

निशानियाँ या मौअज्ज़े भेजने का मक़सद तो लोगों को खबरदार करना होता है, सो यह मक़सद क़ुरान की आयात बख़ूबी पूरा कर रही हैं। इसके बाद अब और कौनसी निशानियों की ज़रुरत बाक़ी है? अगली आयत में यही बात तीन मिसालों से मज़ीद वाज़ेह की गई है कि यह लोग किस तरह क़ुरान की आयात के साथ बहस बराए बहस और इंकार का रवैय्या अपनाए

وَاِنۡ مِّنۡ قَرۡيَةٍ اِلَّا نَحۡنُ مُهۡلِكُوۡهَا قَبۡلَ يَوۡمِ الۡقِيٰمَةِ اَوۡ مُعَذِّبُوۡهَا عَذَابًا شَدِيۡدًا‌ؕ

"और नहीं है कोई बस्ती मगर हम उसे हलाक करके रहेंगे रोज़े क़यामत से क़ब्ल या हम अज़ाब देंगे उसे बहुत ही शदीद अज़ाब।"

यह इशारा है उस बहुत बड़ी तबाही की तरफ़ जो क़यामत से पहले इस दुनिया पर आने वाली है। सूरतुल कह्फ़ की दूसरी आयत में इसका ज़िक्र इस तरह किया गया है: { لِّيُنذِرَ بَأۡسًا شَدِيدًا مِّن لَّدُنۡهُ}। सूरह बनी इस्राईल और सूरह कह्फ़ का आपस में चूँकि ज़ौजियत का ताल्लुक़ है इसलिए यह मज़मून इन दोनों आयात को मिला कर पढ़ने से वाज़ेह होता है। अहादीस में "मल्हमातुल उज़्मा" के नाम से एक बहुत बड़ी जंग की पेशनगोई की गई है जो क़यामत से पहले दुनिया में बरपा होगी। आयत ज़ेरे नज़र में उसी तबाही का ज़िक्र है जिससे रुए ज़मीन पर मौजूद कोई बस्ती महफ़ूज़ नहीं रहेगी। सूरतुल कह्फ़ में ज़्यादा सराहत के साथ इसका तज़किरा आयेगा।

इस वक़्त दुनिया में एटमी जंग झिड़ने का इम्कान हर वक़्त मौजूद है। अगर ख़ुदा ना ख्वास्ता किसी वक़्त ऐसा सानेहा (युद्ध) रूनुमा हो जाता है तो एटमी हथियारों की वजह से दुनिया पर जो तबाही आयेगी उसको तसव्वुर में लाना भी मुश्किल है। इन हालात में मल्हमातुल उज़्मा के बारे में पेशनगोईयाँ आज मुज्जसम सूरत में सामने खड़ी नज़र आती हैं।

كَانَ ذٰلِكَ فِى الۡكِتٰبِ مَسۡطُوۡرًا ۝۵۸

"यह (अल्लाह की) किताब में लिखा हुआ है।"

यानि यह तयशुदा अमूर में से है। एक वक़्ते मुअय्यन पर यह सब कुछ होकर रहना है।

आयत 59

हुए हैं और यह कि अल्लाह ने हिस्सी मौअज्ज़ात दिखाना क्यों बंद कर दिये हैं।

आयत 60

وَاِذْ قُلْنَا لَكَ اِنَّ رَبَّكَ اَحَاطَ بِالنَّاسِ ؕ

"और जब हम आप ﷺ से कहते हैं कि आप ﷺ के रब ने लोगों का अहाता किया हुआ है।"

क़ुरान हकीम की बहुत सी ऐसी आयात हैं जिनमें अल्लाह तआला ने फ़रमाया है कि वो लोगों का अहाता किए हुए है, मसलन: {وَّاللّٰهُ مِنْ وَّرَآىِٕهِمْ مُّحِيْطٌ} (अल् बुरूज:20) "और अल्लाह इनका हर तरफ़ से अहाता किए हुए है।" यह लोग जब ऐसी आयात सुनते हैं तो डरने की बजाय फ़ज़ूल बहस पर उतर आते हैं कि इसका क्या मतलब है? कहाँ है अल्लाह? हमारा अहाता क्योंकर हुआ है?

अगर फ़लसफ़ियाना पहलु से देखा जाये तो इस आयत में "हक़ीक़त व माहियते वजूद" के मौज़ू से मुताल्लिक़ इशारा पाया जाता है जो फ़लसफ़े का मुश्किल तरीन मसला है और आसानी से समझ में आने वाला नहीं है, यानि एक वजूद ख़ालिक़ का है, वो हर जगह, हर आन मौजूद है, और एक वजूद मख़्लूक़ यानि इस कायनात का है। अब ख़ालिक़ व मख़्लूक़ के माबैन रब्त क्या है? इस सिलसिले में कुछ लोग "हमाऊस्त" (Pantheism) के क़ायल हो गये। उनके ख़्याल के मुताबिक़ यह कायनात ही ख़ुदा हैं, ख़ुदा ने ही कायनात का रूप धार लिया है, जैसे ख़ुदा ख़ुद ही इंसानों का रूप धार कर "अवतार" की सूरत में ज़मीन पर आ जाता है। यह बहुत बड़ा कुफ़्र और शिर्क है। दूसरी तरफ़ अगर यह समझे कि अल्लाह का वजूद इस कायनात में नहीं है तो इसका मतलब यह होगा कि उसका वजूद कहीं अलग है और वो नऊज़ुबिल्लाह कहीं महदूद होकर रह गया है। बहरहाल यह मसला आसानी से समझ में नहीं आता। हमें बस इस क़द्र समझ लेना चाहिए कि अल्लाह का वजूद मुल्लक़ (absolute) है। वो हदूद व क़ुयूद, ज़मान व मकान, किसी सिम्त या जहत के तसव्वुर से मा-वराअ, वराउल वराअ, सुम्मा वराउल वराअ है।

وَمَا جَعَلْنَا الرُّءْيَا الَّتِيْٓ اَرَيْنٰكَ اِلَّا فِتْنَةً لِّلنَّاسِ

"और नहीं बनाया हमने इस मुशाहिदे को जो हमने आप ﷺ को दिखाया था मगर एक फ़ितना लोगों के लिए"

यहाँ पर लफ़्ज़ "रुअया" ख़्वाब के मायने में नहीं आया बल्कि इससे रुइयत बसरी मुराद है। इंसान अपनी आँखों से जो कुछ देखता है उस पर भी "रुअया" का इत्लाक़ होता है। अल्लाह तआला ने शबे मेराज में हुज़ूर ﷺ को जो मुशाहिदात कराए थे और जो निशानियाँ आप ﷺ को दिखाई थीं उनकी तफ़्सील जब कुफ़्फ़ारे मक्का ने सुनी तो यह मामला उनके लिए एक फ़ितना बन गया। वो ना सिर्फ़ ख़ुद इसके मुन्किर हुए, बल्कि इसकी बुनियाद पर वो मुसलमानों को उनके दीन से बरगश्ता करने की कोशिश में लग गये। इस वाक़िये को बुनियाद बना कर उन्होंने पूरी शद्दो-मद से यह प्रचार शुरू कर दिया कि मुहम्मद ﷺ पर जुनून के असरात हो चुके हैं (मआज़ अल्लाह, सुम्मा मआज़ अल्लाह)। उस ज़माने में जब मक्के से बैतुल मुक़द्दस पहुँचने में पन्द्रह दिन लगते थे, यह दावा इन्तहाई ना-क़ाबिले यक़ीन मालूम होता था कि कोई शख़्स रातों-रात ना सिर्फ़ बैतुल मुक़द्दस से हो आया है बल्कि आसमानों की सैर भी कर आया है। चुनाँचे उन्होंने मौक़ा गनीमत समझ कर इस मौज़ू को ख़ूब उछाला और मुसलमानों से बढ़-चढ़ कर बहस मुबाहिसे किए। इस तरह ना सिर्फ़ यह बात कुफ़्फ़ार के लिए फ़ितना बन गई बल्कि मुसलमानों के लिए भी एक आज़माईश क़रार पाई।

जब यही ना-क़ाबिले यक़ीन बात उन लोगों ने हज़रत अबुबक्र सिद्दीक़ रज़ि. से की और आपसे तबसरा चाहा तो आपने बिला तौक़फ़ जवाब दिया कि अगर वाक़ई हुज़ूर ﷺ ने ऐसा फ़रमाया है तो यक़ीनन सच फ़रमाया है, क्योंकि जब मैं यह मानता हूँ कि आप ﷺ के पास आसमानों से हर रोज़ फ़रिश्ता आता है तो मुझे आप ﷺ का यह दावा तस्लीम करने में

आख़िर क्यों कर ताम्मुल होगा कि आप ﷺ रातों-रात आसमानों की सैर कर आये हैं! इसी बिला ताम्मुल तस्दीक़ की बिना पर उस दिन से हज़रत अबुबक्र रज़ि. का लक़ब "सिद्दीक़-ए-अकबर रज़ि." क़रार पाया।

وَالشَّجَرَةَ الْمَلْعُوْنَةَ فِي الْقُرْاٰنِ ؕ

"और उस दरख़्त को भी जिस पर क़ुरान में लानत वारिद हुई है।"

इसी तरह जब क़ुरान में ज़क्क़ूम के दरख़्त का ज़िक्र आया और उसके बारे में यह बताया गया कि इस दरख़्त की जड़ें जहन्नम की तह में होंगी (अस्सफ़ात 64) और वहाँ से यह जहन्नम की आग में परवान चढ़ेगा तो यह बात भी उन लोगों के लिए फ़ितने का बाइस बन गई। बजाय इसके कि वो लोग इसे अल्लाह की क़ुदरत समझ कर तस्लीम कर लेते, उलटे इस बात पर तमस्ख़र और इस्तेहज़ा करने लगे कि आग के अंदर भला दरख़्त कैसे पैदा हो सकते हैं? उन्हें क्या मालूम कि यह उस आलम की बात है जिसके तबई क़वानीन इस दुनिया के तबई क़वानीन से मुख़्तलिफ़ होंगे और जहन्नम की आग की नौइयत और कैफ़ियत की भी हमारी दुनिया की आग से मुख़्तलिफ़ होगी।

وَنُخَوِّفُهُمْ ۙ فَمَا يَزِيْدُهُمْ اِلَّا طُغْيَانًا كَبِيْرًا ۝٦٠

"और (इन बातों से) हम तो उन्हें तम्बीह करते हैं मगर यह तम्बीह उनकी सरकशी ही में इज़ाफ़ा किए जा रही है।"

क़ुरान में यह सब बातें उन्हें खबरदार करने के लिए नाज़िल हुई हैं, मगर यह उन लोगों की बदबख़्ती है कि अल्लाह की आयात सुन कर डरने और ईमान लाने के बजाय वो मज़ीद सरकश होते जा रहे हैं और उनकी सरकशी में रोज़-बरोज़ मज़ीद इज़ाफ़ा होता जा रहा है।

आयात 61 से 65 तक

وَاِذْ قُلْنَا لِلْمَلٰٓئِكَةِ اسْجُدُوْا لِاٰدَمَ فَسَجَدُوْٓا اِلَّآ اِبْلِيْسَ ؕ قَالَ ءَاَسْجُدُ لِمَنْ خَلَقْتَ طِيْنًا ۝٦١ قَالَ اَرَءَيْتَكَ هٰذَا الَّذِيْ كَرَّمْتَ عَلَيَّ لَئِنْ اَخَّرْتَنِ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَاَحْتَنِكَنَّ ذُرِّيَّتَهٗٓ اِلَّا قَلِيْلًا ۝٦٢ قَالَ اذْهَبْ فَمَنْ تَبِعَكَ مِنْهُمْ فَاِنَّ جَهَنَّمَ جَزَآؤُكُمْ جَزَآءً مَّوْفُوْرًا ۝٦٣ وَاسْتَفْزِزْ مَنِ اسْتَطَعْتَ مِنْهُمْ بِصَوْتِكَ وَاَجْلِبْ عَلَيْهِمْ بِخَيْلِكَ وَرَجِلِكَ وَشَارِكْهُمْ فِي الْاَمْوَالِ وَالْاَوْلَادِ وَعِدْهُمْ ؕ وَمَا يَعِدُهُمُ الشَّيْطٰنُ اِلَّا غُرُوْرًا ۝٦٤ اِنَّ عِبَادِيْ لَيْسَ لَكَ عَلَيْهِمْ سُلْطٰنٌ ؕ وَكَفٰى بِرَبِّكَ وَكِيْلًا ۝٦٥

आयत 61

وَاِذْ قُلْنَا لِلْمَلٰٓئِكَةِ اسْجُدُوْا لِاٰدَمَ فَسَجَدُوْٓا اِلَّآ اِبْلِيْسَ ؕ

"और याद करो जब हमने कहा था फ़रिश्तों से कि सज्दा करो आदम अलै. को तो उन सबने सज्दा किया मगर इब्लीस ने (नहीं किया)।"

قَالَ ءَاَسْجُدُ لِمَنْ خَلَقْتَ طِيْنًا ۝٦١

"उसने कहा कि क्या मैं उसे सज्दा करूँ जिसे तूने पैदा किया है मिट्टी से?"

हज़रत आदम अलै. और इब्लीस का यह क़िस्सा यहाँ चौथी मर्तबा बयान हो रहा है। इससे पहले सूरतुल बक़रह रुकूअ 4, सूरतुल आराफ़ रुकूअ 12 और सूरतुल हिज्र रुकूअ 3 में इस क़िस्से का ज़िक्र हो चुका है।

आयत 62

"उसने (मज़ीद) कहा कि ज़रा देख तो उसको जिसको तूने मुझ पर फ़ज़ीलत दी है, अगर तू मुझे मोहलत दे दे क़यामत के दिन तक, तो मैं उसकी पूरी नस्ल को क़ाबू में करके छोड़ुँगा, सिवाय बहुत थोड़े से लोगों के।"

قَالَ اَرَءَيْتَكَ هٰذَا الَّذِىْ كَرَّمْتَ عَلَىَّ لَئِنْ اَخَّرْتَنِ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَاَحْتَنِكَنَّ ذُرِّيَّتَهٗٓ اِلَّا قَلِيْلًا ﴿٦٢﴾

आयत 63

"अल्लाह ने फ़रमाया: जाओ (दफ़ा हो जाओ!) उनमें से जो भी तेरी पैरवी करेंगे तो यक़ीनन तुम सबकी सज़ा जहन्नम होगी, वाफ़र सज़ा।"

قَالَ اذْهَبْ فَمَنْ تَبِعَكَ مِنْهُمْ فَاِنَّ جَهَنَّمَ جَزَآؤُكُمْ جَزَآءً مَّوْفُوْرًا ﴿٦٣﴾

आयत 64

"और तू फ़िसला ले जिस पर तेरा बस चलता है उनमें से अपनी आवाज़ से"

وَاسْتَفْزِزْ مَنِ اسْتَطَعْتَ مِنْهُمْ بِصَوْتِكَ

अरबी में बकरी के ऐसे नवजात बच्चे को "फ़ज्ज़" कहते हैं जो अभी ठीक से चलने के क़ाबिल ना हुआ हो और खड़ा होने की कोशिश में उसकी टाँगें लड़खड़ाती हों। इस मुनास्बत से यह लफ़्ज़ मुहावरतन उस शख़्स के लिए बोला जाता है जिसकी टाँगें किसी मामले में लड़खड़ा जायें, क़दम डगमगा जायें और हिम्मत जवाब दे दे।

"और चढ़ा ला उन पर अपने सवारों और प्यादों को और शरीक बन जा उनका मालों में और औलाद में, और उनसे (जो चाहे) वादे कर!"

وَاَجْلِبْ عَلَيْهِمْ بِخَيْلِكَ وَرَجِلِكَ وَشَارِكْهُمْ فِى الْاَمْوَالِ وَالْاَوْلَادِ وَعِدْهُمْ ؕ

"और नहीं वादा करता उनसे शैतान मगर धोखे का।"

وَمَا يَعِدُهُمُ الشَّيْطٰنُ اِلَّا غُرُوْرًا ﴿٦٤﴾

आयत 65

"यक़ीनन मेरे बंदों पर तुझे कोई इख़्तियार नहीं होगा।"

اِنَّ عِبَادِىْ لَيْسَ لَكَ عَلَيْهِمْ سُلْطٰنٌ ؕ

तुम इंसानों को बहकाने और फिसलाने के लिए जो कुछ कर सकते हो कर लो, उनके दिलों में वसवसे डालो, उनसे झूठे-सच्चे वादे करो और उन्हें सब्ज़ बाग दिखाओ। यह तमाम हरबे तो तुम इस्तेमाल कर सकते हो, लेकिन तुम्हें यह इख़्तियार हरगिज़ नहीं होगा कि तुम मेरे किसी बंदे को उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ गुमराही के रास्ते पर ले जाओ।

"और काफ़ी है तेरा रब बतौर कारसाज़।"

وَكَفٰى بِرَبِّكَ وَكِيْلًا ﴿٦٥﴾

वो बन्दे जो शैतान से बचना चाहेंगे अल्लाह उनकी मदद करेगा, और जिस किसी का मददगार और कारसाज़ अल्लाह हो उसे किसी और सहारे की ज़रुरत नहीं रहती, वही उसके लिए काफ़ी होता है।

आयात 66 से 72 तक

رَبُّكُمُ الَّذِیۡ یُزۡجِیۡ لَكُمُ الۡفُلۡكَ فِی الۡبَحۡرِ لِتَبۡتَغُوۡا مِنۡ فَضۡلِهٖ ؕ اِنَّهٗ كَانَ بِكُمۡ رَحِیۡمًا ۝۶۶ وَاِذَا مَسَّكُمُ الضُّرُّ فِی الۡبَحۡرِ ضَلَّ مَنۡ تَدۡعُوۡنَ اِلَّاۤ اِیَّاهُ ۚ فَلَمَّا نَجّٰىكُمۡ اِلَی الۡبَرِّ اَعۡرَضۡتُمۡ ؕ وَكَانَ الۡاِنۡسَانُ كَفُوۡرًا ۝۶۷ اَفَاَمِنۡتُمۡ اَنۡ یَّخۡسِفَ بِكُمۡ جَانِبَ الۡبَرِّ اَوۡ یُرۡسِلَ عَلَیۡكُمۡ حَاصِبًا ثُمَّ لَا تَجِدُوۡا لَكُمۡ وَكِیۡلًا ۝۶۸ اَمۡ اَمِنۡتُمۡ اَنۡ یُّعِیۡدَكُمۡ فِیۡهِ تَارَةً اُخۡرٰی فَیُرۡسِلَ عَلَیۡكُمۡ قَاصِفًا مِّنَ الرِّیۡحِ فَیُغۡرِقَكُمۡ بِمَا كَفَرۡتُمۡ ثُمَّ لَا تَجِدُوۡا لَكُمۡ عَلَیۡنَا بِهٖ تَبِیۡعًا ۝۶۹ وَلَقَدۡ كَرَّمۡنَا بَنِیۡۤ اٰدَمَ وَحَمَلۡنٰهُمۡ فِی الۡبَرِّ وَالۡبَحۡرِ وَرَزَقۡنٰهُمۡ مِّنَ الطَّیِّبٰتِ وَفَضَّلۡنٰهُمۡ عَلٰی كَثِیۡرٍ مِّمَّنۡ خَلَقۡنَا تَفۡضِیۡلًا ۝۷۰ یَوۡمَ نَدۡعُوۡا كُلَّ اُنَاسٍۭ بِاِمَامِهِمۡ ۚ فَمَنۡ اُوۡتِیَ كِتٰبَهٗ بِیَمِیۡنِهٖ فَاُولٰٓئِكَ یَقۡرَءُوۡنَ كِتٰبَهُمۡ وَلَا یُظۡلَمُوۡنَ فَتِیۡلًا ۝۷۱ وَمَنۡ كَانَ فِیۡ هٰذِهٖۤ اَعۡمٰی فَهُوَ فِی الۡاٰخِرَةِ اَعۡمٰی وَاَضَلُّ سَبِیۡلًا ۝۷۲

आयत 66

"तुम्हारा रब वो है जो चलाता है तुम्हारे लिए कश्तियों को समुद्र में ताकि तुम उसका फ़ज़्ल तलाश कर सको।"

رَبُّكُمُ الَّذِیۡ یُزۡجِیۡ لَكُمُ الۡفُلۡكَ فِی الۡبَحۡرِ لِتَبۡتَغُوۡا مِنۡ فَضۡلِهٖ ؕ

"यक़ीनन वो तुम पर बहुत ही रहीम है।"

اِنَّهٗ كَانَ بِكُمۡ رَحِیۡمًا ۝۶۶

आयत 67

"और जब तुम्हें कोई तकलीफ़ पहुँचती है समुद्र में"

وَاِذَا مَسَّكُمُ الضُّرُّ فِی الۡبَحۡرِ

जब कश्ती तूफ़ान में घिर जाती है और मौत सामने नज़र आने लगती है तो:

"गुम हो जाते हैं वो सब जिन्हें तुम पुकारते हो, सिवाय उस (एक अल्लाह) के।"

ضَلَّ مَنۡ تَدۡعُوۡنَ اِلَّاۤ اِیَّاهُ ۚ

उस वक़्त तुम्हें अपने उन मअबूदों में से कोई भी याद नहीं रहता जिन्हें तुम आम हालात में अपना मददगार समझते हो। उस आड़े वक़्त में तुम सिर्फ़ अल्लाह ही को मदद के लिए पुकारते हो। यह मज़मून क़ुरान में मुतअद्दिद बार आ चुका है।

"फिर जब वो तुम्हें बचा लाता है ख़ुश्की की तरफ़ तो तुम मुहँ मोड़ लेते हो। और इंसान बड़ा ही नाशुक्रा है।"

فَلَمَّا نَجّٰىكُمۡ اِلَی الۡبَرِّ اَعۡرَضۡتُمۡ ؕ وَكَانَ الۡاِنۡسَانُ كَفُوۡرًا ۝۶۷

आयत 68

"तो क्या तुम इस बात से बेख़ौफ़ हो गये हो कि वो धँसा दे तुम्हें कहीं ख़ुश्की में ही?"

اَفَاَمِنۡتُمۡ اَنۡ یَّخۡسِفَ بِكُمۡ جَانِبَ الۡبَرِّ

जब तुम जान बचा कर समुद्र से ख़ुश्की पर आते हो तो फिर अल्लाह की नाशुक्री करते हुए उससे मुँह मोड़ लेते हो। क्या तुम्हें इस बात से ख़ौफ़ नहीं आता कि अगर अल्लाह चाहे तो तुम्हें ख़ुश्क ज़मीन ही के अंदर धँसा दे? क्या ख़ुश्की पर लोगों को मौत नहीं आती?
आसूदा साहिल तू है मगर शायद यह तुझे मालूम नहीं

साहिल से भी मौजें उठती हैं, खामोश भी तूफ़ान होते हैं!

"या वो तुम पर भेज दे कंकर बरसाने वाली तेज़ हवा, फिर तुम ना पाओ अपने लिए कोई बचाने वाला!"

اَوۡ يُرۡسِلَ عَلَيۡكُمۡ حَاصِبًا ثُمَّ لَا تَجِدُوۡا لَكُمۡ وَكِيۡلًا ﴿۶۸﴾

तुम्हें मालूम होना चाहिए कि अल्लाह चाहे तो संगरेज़ों वाली ख़ौफ़नाक आँधी से भी तुम्हें हलाक कर सकता है।

आयत 69

"या तुम बेख़ौफ़ हो गये हो इससे कि वो फिर ले जाये तुम्हें उसी (समुद्र) में दूसरी मर्तबा, फिर भेज दे तुम पर हवा का ज़ोरदार झटका"

اَمۡ اَمِنۡتُمۡ اَنۡ يُّعِيۡدَكُمۡ فِيۡهِ تَارَةً اُخۡرٰى فَيُرۡسِلَ عَلَيۡكُمۡ قَاصِفًا مِّنَ الرِّيۡحِ

"सो तुम्हें गर्क़ कर दे तुम्हारे कुफ़्र की पादाश में, फिर तुम ना पाओ अपने लिए हमारे खिलाफ़ उसकी वजह से कोई तअक्कुब करने वाला!"

فَيُغۡرِقَكُمۡ بِمَا كَفَرۡتُمۡ ثُمَّ لَا تَجِدُوۡا لَكُمۡ عَلَيۡنَا بِهٖ تَبِيۡعًا ﴿۶۹﴾

फिर ऐसा नहीं कि कोई हमसे बाज़पुर्स कर सके कि हमने उन लोगों के साथ ऐसा मामला क्यों किया?

आयत 70

"और हमने बड़ी इज्ज़त बख्शी है औलादे आदम अलै. को"

وَلَقَدۡ كَرَّمۡنَا بَنِىۡۤ اٰدَمَ

यह आयत बहुत वाज़ेह अंदाज़ में उस हक़ीक़त का इज़हार कर रही है कि अल्लाह तआला की तख़्लीक़ की मेराज (climax) इंसान है। इस फ़लसफ़े की वज़ाहत सूरतुल नहल की आयत 40 की तशरीह के ज़िमन में हो चुकी है। वहाँ मैंने बहुत तफ़सील से कायनात और इंसान की तख़्लीक़ के बारे में अपनी राय का इज़हार किया है। इस तफ़सील का खुलासा यह है कि इस कायनात का नुक़्ता-ए-आग़ाज़ अल्लाह तआला का अमर-ए-कुन है। हरफ़े कुन से ख़नक नूर का ज़हूर हुआ, इस नूर से मलाइका और इंसानी अरवाह की तख़्लीक़ हुई, फिर बिग-बैंग के नतीजे में हरारत का गोला वजूद में आया, जिसके मुतहर्रिक ज़र्रात से कहकशाएँ, सितारे और सय्यारे बने। इसी दौर में इस हरारत से जिन्नात की तख़्लीक़ हुई। दूसरे बेशुमार सितारों और सय्यारों की तरह हमारी ज़मीन भी इब्तदा में बहुत गर्म थी। यह आहिस्ता-आहिस्ता ठंडी हुई। फिर इस पर हज़ारों बरस मुसलसल बारिश बरसती रही, जिससे ज़मीन पर हर तरफ़ पानी फैल गया। उसके बाद ज़मीन पर नबाताती और हैवानी हयात का आग़ाज़ हुआ। इसके बाद फिर तमाम मख्लूक़ के बादशाह "इंसान" की तख़्लीक़ अमल में आई। इस पूरे फ़लसफ़े को मिर्ज़ा बैदिल ने अपने इस शेर में बड़ी ख़ूबसूरती से ब्यान किया है:

हर दो आलम ख़ाक शुद ता बस्त नक़्शे आदमी
ऐ बहारे नीस्ती अज़ क़द्रे ख़ुद होशयार बाश

इस ख़ूबसूरत शेर का मफ़हूम व मतलब भी सूरतुल नहल की मज़कूरा आयत की तशरीह के तहत बयान किया गया है।

"और हम उठाए फिरते हैं उन्हें ख़ुश्की और समुन्दर में"

وَحَمَلۡنٰهُمۡ فِى الۡبَرِّ وَالۡبَحۡرِ

यहाँ "हम" से अल्लाह तआला का निज़ामे क़ुदरत मुराद है, जिसके तहत बहरो-बर में इंसानों की मुख्तलिफ़ नौइयत की सरगर्मियाँ मुमकिन बना दी गई हैं और यूँ लगता है जैसे यह मआवन और दोस्ताना माहौल इंसान को अपनी गोद में उठाए हुए है।

وَرَزَقْنٰهُمْ مِّنَ الطَّيِّبٰتِ وَفَضَّلْنٰهُمْ عَلٰى كَثِيْرٍ مِّمَّنْ خَلَقْنَا تَفْضِيْلًا ۝٧٠

"और हमने उन्हें पाकीज़ा चीज़ों से रिज़्क़ अता किया और उन्हें फ़ज़ीलत दी अपनी बहुत सी मख्लूक़ पर, बहुत बड़ी फ़ज़ीलत।"

आयत 71

يَوْمَ نَدْعُوْا كُلَّ اُنَاسٍۢ بِاِمَامِهِمْ ۚ

"जिस दिन हम बुलायेंगे तमाम इंसानों को उनके सरदारों के साथ।"

फिर ज़रा उस दिन का ख़्याल करो जिस दिन तमाम इंसानों को अल्लाह तआला के हुज़ूर पेशी के लिए इस तरह बुलाया जायेगा कि हर गिरोह अपने रहनुमा या लीडर के साथ हाज़िर होगा। पिछली आयात में तमाम मख्लूक़ पर इंसान की फ़ज़ीलत का ज़िक्र किया गया है। चुनाँचे जब इंसान को इस कायनात में इस क़द्र आला मक़ाम और मर्तबे से नवाज़ा गया है तो फिर इसका मुहासबा भी होना चाहिए: "जिनके रुतबे हैं सवा, उनकी सवा मुश्किल है!"

فَمَنْ اُوْتِيَ كِتٰبَهٗ بِيَمِيْنِهٖ فَاُولٰٓئِكَ يَقْرَءُوْنَ كِتٰبَهُمْ وَلَا يُظْلَمُوْنَ فَتِيْلًا ۝٧١

"तो जिसको दिया जायेगा उसका आमाल नामा उसके दाहिने हाथ में तो ऐसे लोग पढ़ेंगे अपने आमाल नामा को (ख़ुशी के साथ) और उन पर ज़ुल्म ना किया जायेगा धागे के बराबर भी।"

आयत 72

وَمَنْ كَانَ فِيْ هٰذِهٖٓ اَعْمٰى فَهُوَ فِي الْاٰخِرَةِ اَعْمٰى وَاَضَلُّ سَبِيْلًا ۝٧٢

"और जो कोई इस दुनिया में अँधा रहा वो आख़िरत में भी अँधा होगा, और राहेरास्त से बहुत दूर भटका हुआ।"

जिस शख़्स ने इस दुनिया में अपनी पूरी ज़िन्दगी हैवानों की तरह गुज़ार दी, जिसका देखना और सुनना हैवानों का सा देखना और सुनना था, जिसने ना तो अनफ़ुस व आफ़ाक़ में बिखरी हुई अल्लाह तआला की अनगिनत निशानियों को चश्मे बसीरत से देखा ना उनके ज़रिये से अपने ख़ालिक़ व मालिक को पहचाना, उसने अपनी ज़िन्दगी गोया अंधेपन में गुज़ार दी। ऐसे शख़्स को क़यामत के दिन ऐसी हालत में उठाया जायेगा कि वो अँधा होगा। इसी अंधेपन से बचने के लिए अल्लामा इक़बाल ने क्या ख़ूब नसीहत की है: दीदन दीगर आमोज़, शनीदन दीगर आमोज़!

आयात 73 से 84 तक

وَاِنْ كَادُوْا لَيَفْتِنُوْنَكَ عَنِ الَّذِيْٓ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ لِتَفْتَرِيَ عَلَيْنَا غَيْرَهٗ ۖ وَاِذًا
لَّاتَّخَذُوْكَ خَلِيْلًا ۝٧٣ وَلَوْلَآ اَنْ ثَبَّتْنٰكَ لَقَدْ كِدْتَّ تَرْكَنُ اِلَيْهِمْ شَيْـًٔا قَلِيْلًا ۝٧٤ ڎ
اِذًا لَّاَذَقْنٰكَ ضِعْفَ الْحَيٰوةِ وَضِعْفَ الْمَمَاتِ ثُمَّ لَا تَجِدُ لَكَ عَلَيْنَا نَصِيْرًا ۝٧٥ وَاِنْ
كَادُوْا لَيَسْتَفِزُّوْنَكَ مِنَ الْاَرْضِ لِيُخْرِجُوْكَ مِنْهَا وَاِذًا لَّا يَلْبَثُوْنَ خِلٰفَكَ اِلَّا
قَلِيْلًا ۝٧٦ سُنَّةَ مَنْ قَدْ اَرْسَلْنَا قَبْلَكَ مِنْ رُّسُلِنَا وَلَا تَجِدُ لِسُنَّتِنَا تَحْوِيْلًا ۝٧٧ ع
اَقِمِ الصَّلٰوةَ لِدُلُوْكِ الشَّمْسِ اِلٰى غَسَقِ الَّيْلِ وَقُرْاٰنَ الْفَجْرِ ۭ اِنَّ قُرْاٰنَ الْفَجْرِ كَانَ
مَشْهُوْدًا ۝٧٨ وَمِنَ الَّيْلِ فَتَهَجَّدْ بِهٖ نَافِلَةً لَّكَ ۖ عَسٰٓى اَنْ يَّبْعَثَكَ رَبُّكَ مَقَامًا
مَّحْمُوْدًا ۝٧٩ وَقُلْ رَّبِّ اَدْخِلْنِيْ مُدْخَلَ صِدْقٍ وَّاَخْرِجْنِيْ مُخْرَجَ صِدْقٍ وَّاجْعَلْ لِّيْ
مِنْ لَّدُنْكَ سُلْطٰنًا نَّصِيْرًا ۝٨٠ وَقُلْ جَاۗءَ الْحَقُّ وَزَهَقَ الْبَاطِلُ ۭ اِنَّ الْبَاطِلَ كَانَ

زَهُوْقًا ﴿٨١﴾ وَنُنَزِّلُ مِنَ الْقُرْاٰنِ مَا هُوَ شِفَآءٌ وَّرَحْمَةٌ لِّلْمُؤْمِنِيْنَ ۙ وَلَا يَزِيْدُ الظّٰلِمِيْنَ
اِلَّا خَسَارًا ﴿٨٢﴾ وَاِذَآ اَنْعَمْنَا عَلَى الْاِنْسَانِ اَعْرَضَ وَنَاٰ بِجَانِبِهٖ ۚ وَاِذَا مَسَّهُ الشَّرُّ
كَانَ يَـُٔوْسًا ﴿٨٣﴾ قُلْ كُلٌّ يَّعْمَلُ عَلٰى شَاكِلَتِهٖ ۭ فَرَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِمَنْ هُوَ اَهْدٰى سَبِيْلًا
﴿٨٤﴾

आयत 73

وَاِنْ كَادُوْا لَيَفْتِنُوْنَكَ عَنِ الَّذِيْٓ
اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ لِتَفْتَرِيَ عَلَيْنَا غَيْرَهٗ ۡ

"और (ऐ नबी ﷺ) यह लोग तो इस बात पर तुले हुए थे कि आपको फितने में डाल कर उस चीज़ से हटा दें जो हमने आपकी तरफ़ वही की है ताकि आप उसके अलावा कोई और चीज़ गढ़ कर हमसे मन्सूब कर दें"

यह आयत उस बेपनाह दवाब की तरफ़ इशारा कर रही है जिसका जिसका सामना रसूल ﷺ को क़ुरैश की तरफ़ से मक्के में था। एक तरफ़ तो क़ुरैश मक्का आप ﷺ पर मुसलसल दबाव डाल रहे थे कि आप ﷺ क़ुरान के ग़ैर लचकदार अहकाम में कुछ नर्मी पैदा करें, इस कलाम में कुछ तरमीम कर लें, कुछ अपनी बात मनवाऐं और कुछ हमारी मानें। यह मज़मून इससे पहले सूरह युनुस आयत 15 में भी आ चुका है: { ائْتِ بِقُرْاٰنٍ غَيْرِ هٰذَآ اَوْ بَدِّلْهُ} "(ऐ मोहम्मद ﷺ) आप इसके अलावा कोई दूसरा क़ुरान पेश करें या फिर इसमें कुछ रद्दो-बदल कर लें।"

दूसरी तरफ़ वो मुसलसल यह मुतालबा भी किए जाते थे कि अगर आप अल्लाह के रसूल हैं तो निशानी के तौर पर हमें कोई मौअज्ज़ा दिखाएँ। उनका यह मुतालबा उनके आवाम तक में बहुत मक़बूल हो चुका था। यही वजह थी कि हुज़ूर ﷺ की अपनी ख़्वाहिश भी यही थी कि उन्हें कोई मौअज्ज़ा दिखा दिया जाये, मगर इस बारे में अल्लाह तआला का फ़ैसला था कि इन्हें कोई हिस्सी मौअज्ज़ा नहीं दिखाया जायेगा। इससे पहले सूरतुल अन्आम (आयत 35) में हम अल्लाह तआला का दो टूक फ़ैसला बायें अल्फ़ाज़ पढ़ आये हैं: { وَاِنْ كَانَ كَبُرَ عَلَيْكَ اِعْرَاضُهُمْ فَاِنِ اسْتَطَعْتَ اَنْ تَبْتَغِيَ نَفَقًا فِي الْاَرْضِ اَوْ سُلَّمًا فِي السَّمَاۗءِ فَتَاْتِيَهُمْ بِاٰيَةٍ} "और अगर आप पर उनकी ये बे ऐतनाई गिराँ गुज़रती हैं तो अगर आप ﷺ इस्तताअत रखते हैं तो ज़मीन में कोई सुरंग खोदें या आसमान में कोई सीढ़ी लगायें और ले आयें उनके लिए कोई मौअज्ज़ा!" चुनाँचे इन दोनो पहलुओं से हुज़ूर ﷺ को शदीद दबाव का सामना था, और इसी दबाव का इज़हार इस आयत में नज़र आ रहा है।

وَاِذًا لَّاتَّخَذُوْكَ خَلِيْلًا ﴿٧٣﴾

"और अगर आप ﷺ ऐसा करते तब तो यह लोग आपको अपना गाढ़ा दोस्त बना लेते।"

तारीख के सफ़हात गवाह हैं कि इस नौइयत की मदाहनत (compromise) के एवज़ वह लोग आप ﷺ को अपना बादशाह भी तस्लीम करने के लिए तैयार थे।

आयत 74

وَلَوْلَآ اَنْ ثَبَّتْنٰكَ لَقَدْ كِدْتَّ تَرْكَنُ
اِلَيْهِمْ شَيْـــًٔا قَلِيْلًا ﴿٧٤﴾

"और अगर हम आपको साबित क़दम ना रखते तो ऐन मुम्किन था कि आप ﷺ उनकी तरफ़ कुछ ना कुछ झुक ही जाते।"

यह बहुत नाज़ुक और अहम मज़मून है। हज़रत युसुफ़ अलै. के बारे में सूरह युसुफ़ में इसी तरह फ़रमाया गया था: { وَلَقَدْ هَمَّتْ بِهٖ ۚ وَهَمَّ بِهَا لَوْلَآ اَنْ رَّاٰ بُرْهَانَ رَبِّهٖ } (आयत 24) यानि अज़ीज़ मिस्र की बीवी ने तो क़सद कर ही लिया था, और युसुफ़ अलै. भी क़सद कर लेते अगर वो अल्लाह की बुरहान ना देख लेते। यानि यह इम्कान था कि बरबनाए तबअ बशरी वो भी इरादा कर बैठते, मगर अल्लाह ने उन्हें इससे महफ़ूज़ रखने का अहतमाम फ़रमाया। हुज़ूर ﷺ

के लिए भी यहाँ इसी तरह फ़रमाया कि अगर हमने आपके पाँव जमा कर आप ﷺ के दिल को अच्छी तरह मज़बूत ना कर दिया होता तो क़रीब था कि आप ﷺ किसी ना किसी हद तक उनकी तरफ़ माइल हो जाते। बहरहाल इन अल्फ़ाज़ से अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि रसूल अल्लाह ﷺ पर इस दौर में क़ुरैश मक्का की तरफ़ से किस क़द्र शदीद दबाव था।

आयत 75

إِذًا لَّأَذَقْنٰكَ ضِعْفَ الْحَيٰوةِ وَضِعْفَ الْمَمَاتِ

"(अगर ऐसा हो जाता) तब हम आप ﷺ को दुगनी सज़ा देते ज़िन्दगी में और दुगनी सज़ा देते मौत पर"

اَلرَّبُّ رَبٌّ وَاِنْ تَنَزَّلَ وَ اَلْعَبْدُ عَبْدٌ وَاِنْ تَرَقّٰى

"रब तो आखिर रब है जितना भी तनज़्ज़ुल फ़रमा ले और बंदा बहरहाल बंदा ही है जिस क़द्र भी तरक्क़ी पा ले!"

ثُمَّ لَا تَجِدُ لَكَ عَلَيْنَا نَصِيْرًا ۝

"फिर ना पाते आप ﷺ अपने लिए हमारे मुक़ाबले में कोई मददगार।"

आयत का मज़मून बहुत नाज़ुक है। बहरहाल मैंने अल्फ़ाज़ के मुताबिक़ तर्जुमा करने की कोशिश की है, लेकिन मौक़ा-महल और सयाक़ व सबाक़ की नज़ाकत को देखते हुए असल मफ़हूम को दक़्क़त नज़री से समझने की ज़रुरत है। अगरचे यह ख़िताब नबी अकरम ﷺ से है मगर सख़्ती का रुख़ उन लोगों की तरफ़ है जिन्होंने अपनी ज़िद्द और हठधर्मी से आप ﷺ के मुक़ाबले में ऐसे हालात पैदा कर रखे थे। इन अल्फ़ाज़ में उन लोगों को सुनाया जा रहा है कि बदबख्तों! तुम जो चाहो कर लो, हमारे नबी (ﷺ) तुम्हारे इस दबाव में आकर तुम्हारे मुतालबात मानने वाले नहीं हैं।

आयत 76

وَاِنْ كَادُوْا لَيَسْتَفِزُّوْنَكَ مِنَ الْاَرْضِ لِيُخْرِجُوْكَ مِنْهَا وَاِذًا لَّا يَلْبَثُوْنَ خِلٰفَكَ اِلَّا قَلِيْلًا ۝

"और यह तुले हुए हैं कि आप ﷺ के क़दम उख़ाड़ दें इस ज़मीन से, ताकि आप ﷺ को यहाँ से निकाल बाहर करें, और (अगर ऐसा हुआ तो) तब वो ख़ुद भी नहीं ठहरेंगे आप ﷺ के बाद मगर थोड़ा अरसा।"

यह मक्की दौर के आखरी अय्याम के उन हालात की झलक है जब इस कशमकश की शिद्दत इन्तहा को पहुँच चुकी थी और हालात बेहद नाज़ुक रुख़ इख़्तियार कर चुके थे। यहाँ पर रसूल अल्लाह ﷺ को (मआज़ अल्लाह) मक्के से निकालने के लिए क़ुरैश की मन्सूबाबन्दी का सिर्फ़ ज़िक्र किया गया है, मगर इसकी नफ़ी करने के बजाय यह पेशनगोई की गई है कि अगर ऐसा हुआ तो आप ﷺ के बाद वो ख़ुद भी यहाँ पर ज़्यादा अरसा नहीं रह सकेंगे। चुनाँचे ऐसा ही हुआ। क़ुरैश के अक्सर सरदार तो हिजरत के दूसरे बरस ही जंगे बदर में क़त्ल हो गये जबकि सिर्फ़ आठ साल बाद मक्का शहर पर आप ﷺ का बाक़ायदा तसल्लुत भी क़ायम हो गया।

आयत 77

سُنَّةَ مَنْ قَدْ اَرْسَلْنَا قَبْلَكَ مِنْ رُّسُلِنَا

"यही (हमारा) तरीक़ा रहा उनके बाब में जिन्हें हमने आप ﷺ से पहले भेजा अपने रसूलों में से"

यानि आप ﷺ से पहले जितने भी रसूल आये उनके बारे में हमारा क़ायदा और क़ानून यही रहा है कि रसूल की हिजरत के बाद मुतालक़ा क़ौम पर से अल्लाह की अमान उठा ली जाती है और उसके बाद वह क़ौम बहुत जल्द अज़ाब की गिरफ्त में आ जाती है।

"और आप हमारे तरीक़े में कोई तब्दीली नहीं पायेंगे।" وَلَا تَجِدُ لِسُنَّتِنَا تَحْوِيلًا ۝

आयत 78

"नमाज़ क़ायम रखिये सूरज के ढ़लने से लेकर रात के तारीक होने तक, और क़ुरान का पढ़ा जाना फ़ज्र के वक़्त।" أَقِمِ الصَّلٰوةَ لِدُلُوكِ الشَّمْسِ إِلٰى غَسَقِ الَّيْلِ وَقُرْاٰنَ الْفَجْرِ

यह हुक्म पँचगाना नमाज़ के बारे में है। सूरज के ढ़लने के साथ ही ज़ौहर की नमाज़ का वक़्त हो जाता है। फिर अस्र, मग़रिब और इशा की नमाज़ों का एक सिलसिला है जो रात गये तक जारी रहता है। पाँचवीं नमाज़ यानि फ़ज्र को यहाँ पर "क़ुरानुल फ़ज्र" से ताबीर किया गया है, क्योंकि इसमें तवील क़िरात की जाती है। वाज़ेह रहे कि नमाज़ पँचगाना के अवक़ात के बारे में यह हुक्म अमूमी नौइयत का है, जबकि हर नमाज़ के वक़्त की ख़ुसूसियत के साथ निशानदेही बाद में हज़रत जिब्रील अलै. ने की जिसकी तफ़सील कुतुब अहादीस में मिलती है।

"यक़ीनन फ़जर के वक़्त क़ुरान का पढ़ा जाना मशहूद है।" إِنَّ قُرْاٰنَ الْفَجْرِ كَانَ مَشْهُودًا ۝

गोया फ़ज़र का वक़्त नमाज़ और क़िरात के ऐतबार से ख़ुसूसी अहमियत का हामिल है। रात भर जिस्मानी और ज़हनी आराम के बाद फ़ज्र के वक़्त इंसान ताज़ा दम होता है। इस वजह से नमाज़ में उसकी हुज़ूरी-ए-क़ल्ब की कैफ़ियत भी बेहतर होती है। इसके अलावा फ़जर का वक़्त फ़रिश्तों की हाज़री के ऐतबार से भी अहम है। दुनिया के मामलात की निग़रानी करने वाले फ़रिश्तों की ड्युटियाँ सुबह और अस्र के अवक़ात में तब्दील होती हैं। चुनाँचे इन दोनों नमाज़ों में दोनो जमाअतों के फ़रिश्ते मौजूद होते हैं। ड्युटी से फ़ारिग होकर जाने वाले फ़रिश्ते भी और आइंदा ड्युटी का चार्ज लेने वाले भी। लिहाज़ा फ़रिश्तों की इस हाज़री की वजह से भी नमाज़े फ़ज्र ख़ुसूसी अहमियत की हामिल है।

आयत 79

"और रात के एक हिस्से में आप ﷺ जागिये इस (क़ुरान) के साथ" وَمِنَ الَّيْلِ فَتَهَجَّدْ بِهٖ

यहाँ लफ्ज़ "बिही" में वही अंदाज़ है जिसकी तकरार इससे पहले हम सूरतुल अन्आम में देख चुके हैं। (اَنْذِرْ بِهٖ، ذَكِّرْ بِهٖ) यानि इन्ज़ार, तज़कीर, तब्शीर, तब्लीग़ सब क़ुरान के ज़रिये से हो। चुनाँचे यहाँ पर रसूल अल्लाह ﷺ को तहज्जुद का हुक्म दिया गया तो फ़रमाया गया कि रात का एक हिस्सा आप क़ुरान के साथ जागिये। तहज्जुद की नमाज़ आप क़ुरान के साथ पढ़ें। गोया तहज्जुद का मक़सद और उसकी असल रूह यही है कि इसमें ज़्यादा से ज़्यादा क़ुरान पढ़ा जाये। छोटी-छोटी सूरतों के साथ रकअतों की मखसूस तादाद पूरी कर लेने से यह मक़सद पूरा नहीं होता।

"यह इज़ाफ़ी चीज़ है आपके लिए, उम्मीद है कि आपका रब आपको मक़ामे महमूद पर फ़ायज़ फ़रमायेगा।" نَافِلَةً لَّكَ ۖ عَسٰٓى أَنْ يَّبْعَثَكَ رَبُّكَ مَقَامًا مَّحْمُودًا ۝

"मक़ामे महमूद" बहुत ही आला और अरफ़ा मक़ाम है जिस पर आँ हुज़ूर ﷺ को मैदाने हश्र में और जन्नत में फ़ायज़ किया जायेगा। हम इस मक़ाम की अज़मत और कैफ़ियत का अंदाजा अपने तसव्वुर से नहीं कर सकते।

आयत 80

وَقُلْ رَّبِّ اَدْخِلْنِیْ مُدْخَلَ صِدْقٍ وَّاَخْرِجْنِیْ مُخْرَجَ صِدْقٍ

"और दुआ कीजिए कि ऐ मेरे रब मुझे दाख़िल कर इज्ज़त का दाख़िल करना और मुझे निकाल इज्ज़त का निकालना"

यह हिजरत की दुआ है। जब हिजरत का इज़्न आया तो साथ ही यह दुआ भी तालीम फ़रमा दी गई कि ऐ अल्लाह! तू मुझे जहाँ भी दाखिल फ़रमाए यानि यस्रिब (मदीने) में, इज्ज़त व तकरीम के साथ दाखिल फरमा, वहाँ पर मेरा दाखिला सच्चा दाखिला हो, और यहाँ मक्के से मुझे निकालना है तो बाइज्ज़त तरीक़े से निकाल। याद कीजिए कि सूरह युनुस की आयत 93 में बनी इस्राईल को अच्छा ठिकाना अता किए जाने का ज़िक्र भी "مُبَوَّاَ صِدْقٍ" के अल्फ़ाज़ से हुआ है।

وَّاجْعَلْ لِّیْ مِنْ لَّدُنْكَ سُلْطٰنًا نَّصِیْرًا ﴿۸۰﴾

"और मुझे ख़ास अपने पास से मददगार क़ुव्वत अता फरमा।"

यानि मदीने में जिस नए दौर का आगाज़ होने वाला है उसमें अपने दीन के गलबे के अस्बाब पैदा फरमा, और मुझे वो ताक़त, क़ुव्वत और इक़्तदार अता फ़रमा जिससे दीन की अमली तन्फ़ीज़ का काम आसान हो जाये। इस दुआ में रसूल अल्लाह ﷺ को बिल्कुल वही कुछ माँगने की तलक़ीन की जा रही है जो अन्क़रीब आप ﷺ को मिलने वाला था। चुनाँचे तारीख़ गवाह है कि मदीने में आपका इस्तक़बाल एक बादशाह की तरह हुआ। औस और ख़ज़रज के क़बाइल ने आपको अपना हाकिम तस्लीम कर लिया। यहूदियों के तीनों क़बाइल एक मुआहिदे के ज़रिए आप ﷺ की मर्ज़ी के ताबेअ हो गये और यूँ आप ﷺ मदीने में दाख़िल होते ही वहाँ के बेताज बादशाह बन गये।

आयत 81

وَقُلْ جَآءَ الْحَقُّ وَزَهَقَ الْبَاطِلُ ؕ

"और आप कह दीजिए कि हक़ आ गया और बातिल भाग गया।"

बज़ाहिर तो अभी इस इन्क़लाब के आसार नमुदार नहीं हुए थे, अभी आठ साल बाद जाकर कहीं मक्का फ़तह होने वाला था, लेकिन आलमे अम्र में चूँकि इसका फैसला हो चुका था लिहाज़ा अभी से आप ﷺ की ज़बान मुबारक से हक़ की आमद और बातिल के फ़रार का ऐलान कराया जा रहा है।

اِنَّ الْبَاطِلَ كَانَ زَهُوْقًا ﴿۸۱﴾

"यक़ीनन बातिल है ही भाग जाने वाला।"

बातिल को सबात नहीं। जब भी इसका हक़ के साथ मआरका होगा तो हक़ के मुक़ाबले में बातिल हमेशा पसपाई इख़्तियार करने पर मजबूर हो जायेगा।

आयत 82

وَنُنَزِّلُ مِنَ الْقُرْاٰنِ مَا هُوَ شِفَآءٌ وَّرَحْمَةٌ لِّلْمُؤْمِنِیْنَ ۙ

"और हम क़ुरान से वो कुछ नाज़िल करते हैं जो शिफ़ा और रहमत है अहले ईमान के हक़ में।"

यहाँ पर फिर क़ुरान का लफ़्ज़ मुलाहिज़ा हो। नोट कीजिए कि ख़ुद क़ुरान का ज़िक्र इस सूरत में जितनी मर्तबा आया है किसी और सूरत में नहीं आया। इस आयत में क़ुरान के अहकाम को अहले ईमान के लिए शिफ़ा और रहमत क़रार दिया गया है। इससे क़ब्ल यही मज़मून सूरह युनुस में इस तरह बयान हुआ है: {يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَآءَتْكُمْ مَّوْعِظَةٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَشِفَآءٌ لِّمَا فِي الصُّدُوْرِ ۙ وَهُدًى وَّرَحْمَةٌ لِّلْمُؤْمِنِيْنَ} "ऐ लोगो! आ गई है तुम्हारे पास नसीहत तुम्हारे रब की तरफ़ से और तुम्हारे सीनों (के अमराज़) की शिफ़ा और अहले ईमान के लिए हिदायत और रहमत।" यानि क़ुरान एक मोमिन के सीने को तमाम आलाईशों और

बीमारियों (मसलन कुफ़्र, शिर्क, तकब्बुर, हसद, हुब्बे माल, हुब्बे जान, हुब्बे औलाद वगैरह) से साफ़ और पाक कर देता है।

وَلَا يَزِيْدُ الظّٰلِمِيْنَ اِلَّا خَسَارًا ﴿٨٢﴾

"लेकिन यह ज़ालिमों को नहीं बढ़ाता मगर ख़सारे ही में।"

जैसा कि सूरतुल बक़रह की आयत नम्बर 56 में फ़रमाया गया है: {يُضِلُّ بِهٖ كَثِيْرًا ۙ وَّيَهْدِيْ بِهٖ كَثِيْرًا ۭ وَمَا يُضِلُّ بِهٖٓ اِلَّا الْفٰسِقِيْنَ}।

आयत 83

وَاِذَآ اَنْعَمْنَا عَلَي الْاِنْسَانِ اَعْرَضَ وَنَاٰ بِجَانِبِهٖ ۚ

"और जब हम इंसान को नेअमतों से नवाज़ते हैं तो वो ऐराज़ करता है और (हमसे) कन्नी कतराने लगता है।"

وَاِذَا مَسَّهُ الشَّرُّ كَانَ يَـُٔوْسًا ﴿٨٣﴾

"और जब उस पर कोई तकलीफ़ आ पड़ती है तो मायूस होकर रह जाता है।"

आयत 84

قُلْ كُلٌّ يَّعْمَلُ عَلٰي شَاكِلَتِهٖ ۭ

"आप कह दीजिए कि हर शख़्स काम करता है अपने शाकिला के मुताबिक़।"

"शाकिला" से मुराद हर इंसान की शख़्सियत का मखसूस साँचा है, जैसे आपको किसी धातु से कोई शय बनानी है तो पहले उसका एक साँचा (pattern) बनाते हैं और उस धात को पिघला कर उसमें डाल देते हैं तो वो धातु वही मख़सूस शक्ल इख़्तियार कर लेती है। इंसानी शख़्सियत के मख़सूस साँचे की तश्कील में इंसान की मौरूसी genes और उसका ख़ारजी माहौल बुनियादी किरदार अदा करते हैं। गोया मौरूसी अवामिल और माहौलयाती अवामिल के हासिल ज़र्ब से इंसान की शख़्सियत का जो ह्यूला बनता है वही उसका शाकिला है। किसी शख़्स ने नेकी और बुराई के लिए जो भी मेहनत और कोशिश करनी है वो अपने इस शाकिले के अन्दर रह कर ही करनी होगी। गोया किसी इन्सान का शाकिला उसके दायरा-ए-अमल की हुदूद का तअय्युन करता है। वो ना तो इन हुदूद से तजावुज़ कर सकता है और ना ही इनसे बढ़ कर अमल करने का वह मुकल्लफ़ है। जैसे अँग्रेज़ी में कहा जाता है: One cannot grow out of his skin यानि किसी ने मोटा होने की जितनी भी कोशिश करनी है अपनी खाल के अंदर रह कर ही करनी है। वह अपनी खाल से बाहर बहरहाल नहीं निकल सकता। चुनाँचे हर शख़्स अपने शाकिला के मुताबिक़ अमल करता है और अल्लाह को खूब इल्म है कि उसने किसको किस तरह का शाकिला दे रखा है। और वो हर शख़्स से उसके शाकिला की मुनास्बत से ही हिसाब लेगा। (इस मज़मून की मज़ीद वज़ाहत के लिए मुलाहिज़ा हो बयानुल क़ुरान, जिल्द अव्वल, सूरतुल बक़रह, तशरीह आयत 286)

فَرَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِمَنْ هُوَ اَهْدٰى سَبِيْلًا ﴿٨٤﴾ ع

"पस आपका रब खूब जानता है उसे जो ज़्यादा सीधे रास्ते पर है।"

इस मज़मून की वज़ाहत करते हुए रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: ((اَلنَّاسُ مَعَادِنُ))[22] कि इंसान मादनियात की तरह हैं। मादनियात में से हर एक की अपनी-अपनी ख़ुसूसियात (properties) होती है। सोने की ore चाँदी की ore से बिल्कुल मुख़्तलिफ़ ख़ुसूसियात की हामिल है। इसी तरह हर इंसान की अपनी-अपनी ख़ुसूसियात हैं और अल्लाह तआला हर एक की ख़ुसूसियात से खूब वाक़िफ़ है।

आयात 85 से 93 तक

وَيَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الرُّوْحِ ؕ قُلِ الرُّوْحُ مِنْ اَمْرِ رَبِّيْ وَمَآ اُوْتِيْتُمْ مِّنَ الْعِلْمِ اِلَّا
قَلِيْلًا ۝٨٥ وَلَئِنْ شِئْنَا لَنَذْهَبَنَّ بِالَّذِيْٓ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ ثُمَّ لَا تَجِدُ لَكَ بِهٖ عَلَيْنَا
وَكِيْلًا ۝٨٦ اِلَّا رَحْمَةً مِّنْ رَّبِّكَ ؕ اِنَّ فَضْلَهٗ كَانَ عَلَيْكَ كَبِيْرًا ۝٨٧ قُلْ لَّئِنِ
اجْتَمَعَتِ الْاِنْسُ وَالْجِنُّ عَلٰٓى اَنْ يَّاْتُوْا بِمِثْلِ هٰذَا الْقُرْاٰنِ لَا يَاْتُوْنَ بِمِثْلِهٖ وَلَوْ
كَانَ بَعْضُهُمْ لِبَعْضٍ ظَهِيْرًا ۝٨٨ وَلَقَدْ صَرَّفْنَا لِلنَّاسِ فِيْ هٰذَا الْقُرْاٰنِ مِنْ كُلِّ
مَثَلٍ ۚ فَاَبٰٓى اَكْثَرُ النَّاسِ اِلَّا كُفُوْرًا ۝٨٩ وَقَالُوْا لَنْ نُّؤْمِنَ لَكَ حَتّٰى تَفْجُرَ لَنَا مِنَ
الْاَرْضِ يَنْۢبُوْعًا ۝٩٠ اَوْ تَكُوْنَ لَكَ جَنَّةٌ مِّنْ نَّخِيْلٍ وَّعِنَبٍ فَتُفَجِّرَ الْاَنْهٰرَ خِلٰلَهَا
تَفْجِيْرًا ۝٩١ اَوْ تُسْقِطَ السَّمَآءَ كَمَا زَعَمْتَ عَلَيْنَا كِسَفًا اَوْ تَاْتِيَ بِاللّٰهِ وَالْمَلٰٓئِكَةِ
قَبِيْلًا ۝٩٢ اَوْ يَكُوْنَ لَكَ بَيْتٌ مِّنْ زُخْرُفٍ اَوْ تَرْقٰى فِي السَّمَآءِ ؕ وَلَنْ نُّؤْمِنَ لِرُقِيِّكَ
حَتّٰى تُنَزِّلَ عَلَيْنَا كِتٰبًا نَّقْرَؤُهٗ ؕ قُلْ سُبْحَانَ رَبِّيْ هَلْ كُنْتُ اِلَّا بَشَرًا رَّسُوْلًا ۝٩٣

आयत 85

وَيَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الرُّوْحِ ؕ

"(ऐ नबी ﷺ) यह लोग आपसे पूछते हैं रूह के बारे में।"

قُلِ الرُّوْحُ مِنْ اَمْرِ رَبِّيْ وَمَآ اُوْتِيْتُمْ مِّنَ الْعِلْمِ اِلَّا قَلِيْلًا ۝٨٥

"आप फ़रमा दीजिए कि रूह मेरे रब के अम्र में से है और तुम्हें नहीं दिया गया इल्म मगर थोड़ा सा।"

रूह के बारे में यह सवाल उन तीन सवालात में से था जो एक मर्तबा मदीने के यहूदियों ने क़ुरैशे मक्का के ज़रिए रसूल अल्लाह ﷺ से पूछ भेजे थे। उनमें से एक सवाल अस्हाबे कह्फ़ के बारे में था और दूसरा ज़ुलक़रनैन के बारे में। इन दोनों सवालात के तफ़सीली जवाबात सूरह कह्फ़ में दिए गये हैं, मगर रूह के मुताल्लिक़ सवाल का इन्तहाई मुख़्तसर जवाब इस सूरत में दिया गया है।

इस बारे में यहाँ सिर्फ़ इतना बताया गया है कि रूह का ताल्लुक़ आलमे अम्र से है और आलमे अम्र चूँकि आलमे ग़ैब है इसलिए उसके बारे में तुम लोग कुछ नहीं जान सकते। इंसान के इल्म का ज़रिया उसके हवास हैं और अपने इन हवास के ज़रिए वो सिर्फ़ आलमे ख़ल्क़ की चीज़ों के बारे में जान सकता है, आलमे ग़ैब (आलमे अम्र) तक उसका इल्म रसाई हासिल नहीं कर सकता। चुनाँचे आलमे ग़ैब की बातों को उसे वैसे ही मानना होगा जैसे क़ुरान और रसूल के ज़रिए से बताई गई हों। इसी का नाम ईमान बिल् ग़ैब है, जिसका ज़िक्र क़ुरान मजीद के आग़ाज (सूरह बक़रह, आयत 3) में ही कर दिया गया है: {الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِالْغَيْبِ وَ يُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَ مِمَّا رَزَقْنٰهُمْ يُنْفِقُوْنَ} क़ब्ल अज़े सूरतुल आराफ़ की आयत 154 और सूरह नहल की आयत 40 की तशरीह के ज़िमन में आलमे ख़ल्क़ और आलमे अम्र के बारे में तफ़सीली बहस की जा चुकी है। वहाँ यह भी बताया जा चुका है कि फ़रिश्तों, इंसानी अरवाह और वही का ताल्लुक़ आलमे अम्र से है।

आयत 86

وَلَئِنْ شِئْنَا لَنَذْهَبَنَّ بِالَّذِيْٓ اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ ثُمَّ لَا تَجِدُ لَكَ بِهٖ عَلَيْنَا وَكِيْلًا ۝٨٦

"और (ऐ नबी ﷺ!) अगर हम चाहें तो ले जायें इस (क़ुरान) को जो हमने वही किया है आपकी तरफ़, फिर आप ना पायेंगे अपने लिए इस पर हमारे मुक़ाबले में कोई मददगार।"

आयत 87

إِلَّا رَحْمَةً مِّن رَّبِّكَ ۚ إِنَّ فَضْلَهُ كَانَ عَلَيْكَ كَبِيرًا ﴿٨٧﴾

"मगर यह तो रहमत है आप ﷺ के रब की तरफ़ से। इसमें कोई शक नहीं कि उसका फ़ज़्ल आप ﷺ पर बहुत बड़ा है।"

यह क़ुरान का ख़ास असलूब है जिसके मुताबिक़ बज़ाहिर ख़िताब तो हुज़ूर ﷺ से है मगर असल में लोगों को यह बावर कराना मक़सूद है कि आप ﷺ का असल मक़ाम मर्तबा क्या है। इसी मक़सद के लिए आप ﷺ से बार-बार اَنَا بَشَرٌ مِّثْلُكُمْ का ऐलान कराया गया है कि ऐ लोगो! मैं तुम्हारी तरह एक इंसान हूँ, मुझ पर अल्लाह की तरफ़ से वही आती है। यहाँ इसी बात की ताकीद के लिए यह असलूब इख़्तियार किया गया है कि यह हमारी अता और मेहरबानी है कि हमने ब-ज़रिया-ए-वही आप पर यह अज़ीमुश्शान कलाम नाज़िल किया है। अग़रचे इसका हरग़िज़-हरग़िज़ कोई इम्कान नहीं था, मगर महज़ एक उसूली बात समझाने के लिए फ़रमाया गया कि जिस तरह हमने यह कलाम नाज़िल किया है इसी तरह हम इसे वापस भी ले सकते हैं, इसे सल्ब भी कर सकते हैं। यह कलाम ना तो आप ﷺ का खुदसाख्ता है और ना ही आप ﷺ इसे अपने पास रखने पर क़ादिर हैं। यह तो सरासर अल्लाह की मेहरबानी और उसकी रहमत का मज़हर है और वही इसे आप ﷺ के सीने में जमा करके महफ़ूज़ फ़रमा रहा है।

आयत 88

قُل لَّئِنِ اجْتَمَعَتِ الْإِنسُ وَالْجِنُّ عَلَىٰ أَن يَأْتُوا بِمِثْلِ هَٰذَا الْقُرْآنِ لَا يَأْتُونَ بِمِثْلِهِ وَلَوْ كَانَ بَعْضُهُمْ لِبَعْضٍ ظَهِيرًا ﴿٨٨﴾

"आप ﷺ कह दीजिए कि अगर जमा हो जायें तमाम इंसान और तमाम जिन्न इस बात पर कि वो इस क़ुरान की मानिंद ले आयें तो वो नहीं ला सकेंगे इसकी मानिंद, अग़रचे वो एक-दूसरे के मददगार भी बन जायें।"

इस मौज़ू पर क़ुरान का अपने मुख़ातबीन से यह सबसे पहला मुतालबा है जिसमें उनसे पूरे क़ुरान का जवाब देने को कहा गया है।

आयत 89

وَلَقَدْ صَرَّفْنَا لِلنَّاسِ فِي هَٰذَا الْقُرْآنِ مِن كُلِّ مَثَلٍ

"और हमने फेर-फेर कर बयान की हैं लोगों के लिए इस क़ुरान में हर तरह की मिसालें"

فَأَبَىٰ أَكْثَرُ النَّاسِ إِلَّا كُفُورًا ﴿٨٩﴾

"लेकिन अक्सर लोग इंकार (और कुफ़्राने नेअमत) ही पर अड़े हुए हैं।"

आयत 90

وَقَالُوا لَن نُّؤْمِنَ لَكَ

"और उन्होंने कहा कि हम हरग़िज आप ﷺ की बात नहीं मानेगें"

حَتَّىٰ تَفْجُرَ لَنَا مِنَ الْأَرْضِ يَنبُوعًا ﴿٩٠﴾

"यहाँ तक कि आप ﷺ जारी कर दें हमारे लिए ज़मीन से एक चश्मा।"

मुशरिकीने मक्का की तरफ़ से इस तरह के मुतालबात बार-बार किये जाते थे कि जब तक आप ﷺ हमें कोई मौअज्ज़ा नहीं दिखायेंगे हम आप ﷺ को रसूल नहीं मानेंगे।

आयत 91

اَوۡ تَكُوۡنَ لَكَ جَنَّةٌ مِّنۡ نَّخِيۡلٍ وَّعِنَبٍ فَتُفَجِّرَ الۡاَنۡهٰرَ خِلٰلَهَا تَفۡجِيۡرًا ۝

"या आप ﷺ के लिए बन जाये खजूरों और अंगूरों का एक बाग, फिर आप जारी कर दें उसके अंदर नहरें।"

आयत 92

اَوۡ تُسۡقِطَ السَّمَآءَ كَمَا زَعَمۡتَ عَلَيۡنَا كِسَفًا

"या आप ﷺ गिरा दें आसमान हम पर टुकड़े-टुकड़े करके जैसा कि आप दावा करते हैं"

यानि आप ﷺ हमें क़यामत के हवाले से ख़बरें सुना-सुना कर जो डराते रहते हैं कि उस वक़्त आसमान फट जायेगा और पहाड़ रेज़ा-रेज़ा हो जायेंगे, तो आप ﷺ आसमान का कोई टुकड़ा अभी हम पर गिरा कर दिखा दें।

اَوۡ تَاۡتِىَ بِاللّٰهِ وَالۡمَلٰٓئِكَةِ قَبِيۡلًا ۝

"या आप ले आयें अल्लाह को और फ़रिश्तों को (हमारे) सामने।"

आयत 93

اَوۡ يَكُوۡنَ لَكَ بَيۡتٌ مِّنۡ زُخۡرُفٍ اَوۡ تَرۡقٰى فِى السَّمَآءِ ؕ

"या आप ﷺ के लिए सोने का एक महल (तामीर) हो जाये, या आप आसमान में चढ़ जायें"

وَلَنۡ نُّؤۡمِنَ لِرُقِيِّكَ حَتّٰى تُنَزِّلَ عَلَيۡنَا كِتٰبًا نَّقۡرَؤُهٗ ؕ

"और हम आप ﷺ के (आसमान में) चढ़ने को भी नहीं मानेंगे यहाँ तक कि आप ﷺ उतार लायें एक किताब जिसे हम ख़ुद पढ़ें।"

उन लोगों के इन तमाम मुतालबात के जवाब में सिर्फ़ एक बात फ़रमाई गई:

قُلۡ سُبۡحَانَ رَبِّىۡ هَلۡ كُنۡتُ اِلَّا بَشَرًا رَّسُوۡلًا ۝

"आप ﷺ कह दीजिए कि मेरा रब पाक है, मैं नहीं हूँ मगर एक बशर रसूल।"

यानि मैं भी तुम्हारी तरह का एक इंसान हूँ। मैं भी उसी तरह पैदा हुआ हूँ जिस तरह तुम सब लोग पैदा हुए हो। मैं तुम्हारी ही तरह खाता-पीता हूँ, दुनिया के काम-काज करता हूँ, बाज़ारों में चलता-फिरता हूँ और मैंने हर सतह पर कारोबार भी किया है। मैं तुम्हारे दरमियान एक उम्र गुज़ार चुका हूँ और मेरी सीरत और अख़्लाक़ व किरदार रोज़े रौशन की तरह तुम्हारे सामने है। मुझमें और तुम में बुनियादी फ़र्क़ यह है कि मेरे पास अल्लाह की तरफ़ से वही आती है, और अल्लाह का वह पैग़ाम जो ब-ज़रिया-ए-वही मुझ तक पहुँचता है वो मैं तुम लोगों तक पहुँचाने पर मामूर हूँ।

अग़रचे सीरत व किरदार और मर्तबा-ए-रिसालत व नुबुवत के ऐतबार से आम इंसानों से नबी अकरम ﷺ की कोई मुनास्बत नहीं, मगर आम बशरी तक़ाज़ों के हवाले से उन्हें यह जवाब दिया गया कि मैं भी एक इंसान ही हूँ।

आयात 94 से 100 तक

وَمَا مَنَعَ النَّاسَ اَنۡ يُّؤۡمِنُوۡۤا اِذۡ جَآءَهُمُ الۡهُدٰۤى اِلَّاۤ اَنۡ قَالُوۡۤا اَبَعَثَ اللّٰهُ بَشَرًا رَّسُوۡلًا ﴿۹۴﴾ قُلۡ لَّوۡ كَانَ فِى الۡاَرۡضِ مَلٰٓئِكَةٌ يَّمۡشُوۡنَ مُطۡمَئِنِّيۡنَ لَنَزَّلۡنَا عَلَيۡهِمۡ مِّنَ السَّمَآءِ مَلَكًا رَّسُوۡلًا ﴿۹۵﴾ قُلۡ كَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيۡدًا بَيۡنِىۡ وَبَيۡنَكُمۡ ؕ اِنَّهٗ كَانَ بِعِبَادِهٖ خَبِيۡرًا بَصِيۡرًا ﴿۹۶﴾ وَمَنۡ يَّهۡدِ اللّٰهُ فَهُوَ الۡمُهۡتَدِ ۚ وَمَنۡ يُّضۡلِلۡ فَلَنۡ تَجِدَ لَهُمۡ اَوۡلِيَآءَ مِنۡ دُوۡنِهٖ ؕ وَنَحۡشُرُهُمۡ يَوۡمَ الۡقِيٰمَةِ عَلٰى وُجُوۡهِهِمۡ عُمۡيًا وَّبُكۡمًا وَّصُمًّا ؕ مَاۡوٰٮهُمۡ جَهَنَّمُ ؕ كُلَّمَا خَبَتۡ زِدۡنٰهُمۡ سَعِيۡرًا ﴿۹۷﴾ ذٰلِكَ جَزَآؤُهُمۡ بِاَنَّهُمۡ كَفَرُوۡا بِاٰيٰتِنَا وَقَالُوۡۤا ءَاِذَا كُنَّا عِظَامًا وَّرُفَاتًا ءَاِنَّا لَمَبۡعُوۡثُوۡنَ خَلۡقًا جَدِيۡدًا ﴿۹۸﴾ اَوَلَمۡ يَرَوۡا اَنَّ اللّٰهَ الَّذِىۡ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالۡاَرۡضَ قَادِرٌ عَلٰۤى اَنۡ يَّخۡلُقَ مِثۡلَهُمۡ وَجَعَلَ لَهُمۡ اَجَلًا لَّا رَيۡبَ فِيۡهِ ؕ فَاَبَى الظّٰلِمُوۡنَ اِلَّا كُفُوۡرًا ﴿۹۹﴾ قُلۡ لَّوۡ اَنۡتُمۡ تَمۡلِكُوۡنَ خَزَآئِنَ رَحۡمَةِ رَبِّىۡۤ اِذًا لَّاَمۡسَكۡتُمۡ خَشۡيَةَ الۡاِنۡفَاقِ ؕ وَكَانَ الۡاِنۡسَانُ قَتُوۡرًا ﴿۱۰۰﴾

आयत 94

وَمَا مَنَعَ النَّاسَ اَنۡ يُّؤۡمِنُوۡۤا اِذۡ جَآءَهُمُ الۡهُدٰۤى اِلَّاۤ اَنۡ قَالُوۡۤا اَبَعَثَ اللّٰهُ بَشَرًا رَّسُوۡلًا ﴿۹۴﴾

"और नहीं रोका लोगों को ईमान लाने से जबकि उनके पास हिदायत आ गई, मगर इस बात ने कि उन्होंने कहा: क्या अल्लाह ने भेजा है एक बशर को रसूल बना कर!"

उनका कहना था कि इस काम के लिए उनकी तरफ़ कोई फ़रिश्ता भेजा जाता तो भी कोई बात थी। अब वो अपनी ही तरह के एक इंसान को आख़िर क्योंकर अल्लाह का रसूल मान लें? उनके इस ऐतराज़ के जवाब में जो दलील दी जा रही है वह बहुत अहम है:

आयत 95

قُلۡ لَّوۡ كَانَ فِى الۡاَرۡضِ مَلٰٓئِكَةٌ يَّمۡشُوۡنَ مُطۡمَئِنِّيۡنَ لَنَزَّلۡنَا عَلَيۡهِمۡ مِّنَ السَّمَآءِ مَلَكًا رَّسُوۡلًا ﴿۹۵﴾

"आप ﷺ फ़रमायें कि अगर ज़मीन में फ़रिश्ते (आबाद होते और वो) इत्मिनान से चलते-फिरते होते तो हम ज़रुर उन पर आसमान से किसी फ़रिश्ते ही को रसूल बना कर भेजते।"

रसूल का काम है अल्लाह के पैग़ाम को इंसानों तक पहुँचाना, उसकी एक-एक बात को समझाना और फिर अल्लाह के अहकाम के मुताबिक़ अमल करके अपनी ज़िन्दगी को उनके सामने बतौर नमूना पेश करना। अब ज़ाहिर है इंसानों के लिए तो नमूना तो एक इंसान ही हो सकता है, फ़रिश्ता तो उनके लिए नमूना नहीं बन सकता। चुनाँचे अगर उनके पास एक फ़रिश्ता रसूल बन कर आ जाता तो यही लोग कहते कि यह तो फ़रिश्ता है, इसकी कोई ख़्वाहिश है ना ज़रुरत, ना रिश्ता है ना नाता, ना जज़्बात है ना अहसासात, हमारी इससे क्या निस्बत? हमारी तो घर गृहस्थी है, अहलो अयाल हैं, मजबूरियाँ हैं, ज़रुरतें हैं, तरह-तरह के जंजाल हैं, हम इसकी सीरत और इसके किरदार की पैरवी कैसे कर सकते हैं? अलबत्ता अगर ज़मीन में फ़रिश्ते बसते होते और उनकी तरफ़ रसूल भेजना होता तो ज़रुर किसी फ़रिश्ते ही को इस काम पर मामूर किया जाता, मगर अब मामला चूँकि इंसानों का है लिहाज़ा उन पर हुज्जत कायम करने के लिए लाज़िमन किसी इंसान ही को बतौर रसूल भेजा जाना चाहिए था, सो ऐसा ही हुआ।

आयत 96

قُلۡ كَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيۡدًا بَيۡنِىۡ وَبَيۡنَكُمۡ ؕ

"आप कह दीजिए कि अल्लाह काफ़ी है गवाह मेरे और तुम्हारे दरमियान।"

रद्दो-क़दह बहुत हो चुकी। अब मैं यह मामला अल्लाह तआला के सुपुर्द करता हूँ, जो मेरे और तुम्हारे दरमियान गवाह है। अब वही फ़ैसला करेगा।

"यक़ीनन वो अपने बंदों से बा-ख़बर और उन पर नज़र रखने वाला है।"

اِنَّهٗ كَانَ بِعِبَادِهٖ خَبِيْرًۢا بَصِيْرًا ۝۹۶

आयत 97

"और जिसे अल्लाह हिदायत देता है बस वही हिदायत याफ़्ता होता है"

وَمَنْ يَّهْدِ اللّٰهُ فَهُوَ الْمُهْتَدِ ۚ

"और जिसे वो गुमराह कर दे तो हरगिज़ नहीं पायेंगे आप ऐसे लोगों के लिए कोई मददगार उसके सिवा।"

وَمَنْ يُّضْلِلْ فَلَنْ تَجِدَ لَهُمْ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِهٖ ۭ

"और हम उन्हें जमा करेंगे क़यामत के दिन उनके मुँहों के बल (चलाते हुए), अंधे, गूंगे और बहरे।"

وَنَحْشُرُهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ عَلٰي وُجُوْهِهِمْ عُمْيًا وَّبُكْمًا وَّصُمًّا ۭ

"उनका ठिकाना जहन्नम है। जब भी उसकी आग धीमी होने लगेगी हम उसे उनके लिए मज़ीद भड़का दिया करेंगे।"

مَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ۭ كُلَّمَا خَبَتْ زِدْنٰهُمْ سَعِيْرًا ۝۹۷

आयत 98

"यह सज़ा है उनकी इस बिना पर कि उन्होंने हमारी आयात के साथ कुफ़्र किया"

ذٰلِكَ جَزَاۗؤُهُمْ بِاَنَّهُمْ كَفَرُوْا بِاٰيٰتِنَا

"और उन्होंने कहा कि क्या जब हो जायेंगे हम हड्डियाँ और चूरा-चूरा, तो क्या हम दोबारा उठा लिए जायेंगे एक नई मख्लूक़ की सूरत में?"

وَقَالُوْٓا ءَاِذَا كُنَّا عِظَامًا وَّرُفَاتًا ءَاِنَّا لَمَبْعُوْثُوْنَ خَلْقًا جَدِيْدًا ۝۹۸

आयत 99

"क्या उन्होंने ग़ौर नहीं किया कि वो अल्लाह जिसने आसमानों और ज़मीन को पैदा किया वो इस पर क़ादिर है कि उन जैसे फिर पैदा कर दे"

اَوَلَمْ يَرَوْا اَنَّ اللّٰهَ الَّذِيْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ قَادِرٌ عَلٰٓي اَنْ يَّخْلُقَ مِثْلَهُمْ

जब तुम्हें उसने एक दफ़ा पैदा किया है तो अब तुम्हारी तरह के इंसानों को दोबारा पैदा करना उसके लिए क्योंकर मुश्किल होगा?

"और उसने मुक़र्रर किया है कि उनके लिए एक वक़्ते मुअय्यन जिसमें कोई शक नहीं, मगर इन ज़ालिमों ने इंकार ही किया सिवाय कुफ़्र (और कुफ़्राने नेअमत) के।"

وَجَعَلَ لَهُمْ اَجَلًا لَّا رَيْبَ فِيْهِ ۭ فَاَبَى الظّٰلِمُوْنَ اِلَّا كُفُوْرًا ۝۹۹

उन्होंने अल्लाह के हर हुक्म और उसकी हर आयत से कुफ़्र और इंकार की रविश अपनाए रखी।

आयत 100

قُلْ لَّوْ اَنْتُمْ تَمْلِكُوْنَ خَزَآئِنَ رَحْمَةِ رَبِّيْٓ

"आप ﷺ कहिये कि अगर तुम्हें इख़्तियार होता मेरे रब की रहमत के ख़ज़ानों पर"

اِذًا لَّاَمْسَكْتُمْ خَشْيَةَ الْاِنْفَاقِ ؕ

"तब भी तुम ज़रूर रोक रखते (उन्हें) खर्च हो जाने के डर से।"

अगर अल्लाह की रहमत के बेहिसाब ख़ज़ाने तुम्हारे इख़्तियार में होते तो तुम लोग अपने फ़ितरी बुख़्ल के सबब उनके दरवाज़े भी बंद कर देते कि कहीं ख़र्च होकर ख़त्म ना हो जाये।

وَكَانَ الْاِنْسَانُ قَتُوْرًا ؕ

"और इंसान बहुत ही तंग दिल है।"

आयात 101 से 111 तक

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوْسٰى تِسْعَ اٰيٰتٍۭ بَيِّنٰتٍ فَسْـَٔلْ بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ اِذْ جَآءَهُمْ فَقَالَ لَهٗ
فِرْعَوْنُ اِنِّيْ لَاَظُنُّكَ يٰمُوْسٰى مَسْحُوْرًا ۝ قَالَ لَقَدْ عَلِمْتَ مَآ اَنْزَلَ هٰٓؤُلَآءِ اِلَّا
رَبُّ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ بَصَآئِرَ ۚ وَاِنِّيْ لَاَظُنُّكَ يٰفِرْعَوْنُ مَثْبُوْرًا ۝ فَاَرَادَ اَنْ
يَّسْتَفِزَّهُمْ مِّنَ الْاَرْضِ فَاَغْرَقْنٰهُ وَمَنْ مَّعَهٗ جَمِيْعًا ۝ وَّقُلْنَا مِنْۢ بَعْدِهٖ لِبَنِيْٓ
اِسْرَآءِيْلَ اسْكُنُوا الْاَرْضَ فَاِذَا جَآءَ وَعْدُ الْاٰخِرَةِ جِئْنَا بِكُمْ لَفِيْفًا ؕ وَبِالْحَقِّ
اَنْزَلْنٰهُ وَبِالْحَقِّ نَزَلَ ؕ وَمَآ اَرْسَلْنٰكَ اِلَّا مُبَشِّرًا وَّنَذِيْرًا ۝ وَقُرْاٰنًا فَرَقْنٰهُ لِتَقْرَاَهٗ
عَلَى النَّاسِ عَلٰى مُكْثٍ وَّنَزَّلْنٰهُ تَنْزِيْلًا ۝ قُلْ اٰمِنُوْا بِهٖٓ اَوْ لَا تُؤْمِنُوْا ؕ اِنَّ الَّذِيْنَ
اُوْتُوا الْعِلْمَ مِنْ قَبْلِهٖٓ اِذَا يُتْلٰى عَلَيْهِمْ يَخِرُّوْنَ لِلْاَذْقَانِ سُجَّدًا ۝ وَّيَقُوْلُوْنَ
سُبْحٰنَ رَبِّنَآ اِنْ كَانَ وَعْدُ رَبِّنَا لَمَفْعُوْلًا ۝ وَيَخِرُّوْنَ لِلْاَذْقَانِ يَبْكُوْنَ وَيَزِيْدُهُمْ
خُشُوْعًا ۝ قُلِ ادْعُوا اللّٰهَ اَوِ ادْعُوا الرَّحْمٰنَ ؕ اَيًّا مَّا تَدْعُوْا فَلَهُ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى ۚ
وَلَا تَجْهَرْ بِصَلَاتِكَ وَلَا تُخَافِتْ بِهَا وَابْتَغِ بَيْنَ ذٰلِكَ سَبِيْلًا ۝ وَقُلِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ
الَّذِيْ لَمْ يَتَّخِذْ وَلَدًا وَّلَمْ يَكُنْ لَّهٗ شَرِيْكٌ فِي الْمُلْكِ وَلَمْ يَكُنْ لَّهٗ وَلِيٌّ مِّنَ الذُّلِّ
وَكَبِّرْهُ تَكْبِيْرًا ۝

आयत 101

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوْسٰى تِسْعَ اٰيٰتٍۭ بَيِّنٰتٍ

"और हमने मूसा को वाज़ेह निशानियाँ अता की थीं"

इनमें से तो दो निशानियाँ वो थीं जो आपको इब्तदा में अता हुई थीं, यानि असा का अज़दाह बन जाना और यदे बैयज़ा (सफ़ेद हाथ)। इनके अलावा सात निशानियाँ वो थीं जिनका ज़िक्र सूरतुल आराफ़ की आयत 130 और 133 में हुआ है। यह अल्लाह तआला की तरफ़ से मुख़्तलिफ़ क़िस्म के अज़ाब थे (क़हत साली, फ़लों और फ़सलों का नुक़सान, तूफ़ान, टिड्डी दल, चीटियाँ, मेंढक और खून) जो मिस्र में क़ौमे फ़िरऔन पर मुख्तलिफ़ औक़ात में आते रहे। जब वो लोग अज़ाब की तकालीफ़ से तंग आते तो उसे टालने के लिए हज़रत मूसा अलै. से दुआ की दरख्वास्त करते और हज़रत मूसा अलै. की दुआ से वो अज़ाब टल जाता।

यहाँ यह नुक़्ता लायक़-ए-तवज्जोह है कि सूरत के आग़ाज़ में भी हज़रत मूसा अलै. का ज़िक्र हुआ था और अब आखिर में भी आपका ज़िक्र होने जा रहा है। यह असलूब हमें क़ुरान हकीम की उन सूरतों में मिलता है जो एक ख़ुत्बे के तौर पर एक ही तंज़ील में नाज़िल हुई हैं। ऐसी सूरतों की इब्तदाई और आख़री आयात ख़ुसूसी अहमियत और फ़ज़ीलत की हामिल होती हैं और इनके मज़ामीन में एक ख़ास रब्त पाया जाता है। सूरत के आग़ाज़ (सूरह बनी इस्राइल आयत नम्बर 2) में हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की

हयाते मुबारका के उस दौर का ज़िक्र किया गया है जब आप मिस्र से निकल कर सहराए सीना में आ चुके थे और वहाँ से आपको कोहे तूर पर बुला कर तौरात अता की गई थी: {وَكِيْلًا وَاٰتَيْنَا مُوْسَى الْكِتٰبَ وَجَعَلْنٰهُ هُدًى لِّبَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ اَلَّا تَتَّخِذُوْا مِنْ دُوْنِيْ} "और हमने मूसा को किताब (तौरात) दी और हमने उसे बना दिया हिदायत बनी इस्राईल के लिए, कि तुम मत बनाओ मेरे सिवा किसी को कारसाज़।" अब आखिर में बनी इस्राईल के ज़माना-ए-मिस्र के हालात के हवाले से फिर हज़रत मूसा अलै. का ज़िक्र किया जा रहा है:

فَسْـَٔلْ بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ اِذْ جَآءَهُمْ فَقَالَ لَهٗ فِرْعَوْنُ اِنِّيْ لَاَظُنُّكَ يٰمُوْسٰى مَسْحُوْرًا ۝

"तो ज़रा पूछें बनी इस्राईल से (उस ज़माने का हाल) जबकि मूसा उनके पास आये तो फ़िरऔन ने उनसे कहा कि ऐ मूसा मैं तो तुम्हें एक सहरज़दा आदमी समझता हूँ।"

देखिए जो अल्फ़ाज़ फ़िरऔन ने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से कहे थे ऐन वही अल्फ़ाज़ हुज़ूर ﷺ के लिये आपके मुख़ालफ़ीन की तरफ़ से इस्तेमाल किए गये हैं। इसी सूरत में हम पढ़ आये हैं कि क़ुरैश मक्का आप ﷺ के बारे में कहते थे: {اِنْ تَتَّبِعُوْنَ اِلَّا رَجُلًا مَّسْحُوْرًا} (आयत 47) "तुम नहीं पैरवी कर रहे मगर एक सहरज़दा शख़्स की।"

आयत 102

قَالَ لَقَدْ عَلِمْتَ مَآ اَنْزَلَ هٰٓؤُلَآءِ اِلَّا رَبُّ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ بَصَآئِرَ ۚ

"मूसा अलै. ने कहा: तुझे ख़ूब मालूम है कि नहीं नाज़िल किया इन (निशानियों) को मगर आसमानों और ज़मीन के रब ने आँखें खोल देने के लिए।"

وَاِنِّيْ لَاَظُنُّكَ يٰفِرْعَوْنُ مَثْبُوْرًا ۝

"और ऐ फ़िरऔन! मैं तो तुम्हें हलाकत ज़दा समझता हूँ।"

एक तो हज़रत मूसा अलै. का मिज़ाज जलाली था, दूसरे आप बचपन से उस फ़िरऔन के साथ पले-बढ़े थे, इस तरह उसकी हैसियत आपके छोटे भाई की सी थी। चुनाँचे आपने बड़े बा-रौब अंदाज़ में बिला झिझक जवाब दिया कि तुम्हें तो मुझ पर जादू के असर का गुमान है मगर मैं समझता हूँ कि तू रब्बे कायनात की बसीरत अफ़रोज़ वाज़ेह निशानियों को झुठला कर अपनी हलाकत और बर्बादी को यक़ीनी बना चुका है।

आयत 103

فَاَرَادَ اَنْ يَّسْتَفِزَّهُمْ مِّنَ الْاَرْضِ

"तो उसने इरादा किया कि उन्हें उखाड़ फेंके ज़मीन से"

फ़िरऔन बाक़ायदा मन्सूबा बंदी के तहत बनी इस्राईल की नस्लकशी कर रहा था। वो उनके लड़कों को क़त्ल करवा देता और लड़कियों को ज़िन्दा रहने देता था। और किसी भी क़ौम के मुकम्मल इस्तेसाल का इससे ज़्यादा मुअस्सर तरीक़ा भला और क्या हो सकता है!

فَاَغْرَقْنٰهُ وَمَنْ مَّعَهٗ جَمِيْعًا ۝

"लेकिन हमने ग़र्क़ कर दिया उसको और जो उसके साथ थे सबको।"

आयत 104

وَّقُلْنَا مِنْۢ بَعْدِهٖ لِبَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ اسْكُنُوا الْاَرْضَ

"और उसके बाद हमने बनी इस्राईल को हुक्म दिया कि तुम लोग ज़मीन में आबाद हो जाओ"

فَاِذَا جَآءَ وَعْدُ الْاٰخِرَةِ جِئْنَا بِكُمْ لَفِيْفًا ۝

"फिर जब आयेगा पिछले वादे का वक़्त तो हम ले आयेंगे तुम सबको समेट कर।"

अक्सर व बेशतर मुफ़स्सरीन ने وَعْدُ الْاٰخِرَةِ से आख़िरत यानि क़यामत मुराद ली है। यानि जब क़यामत आयेगी तो तुम लोग जहाँ कहीं भी होगे सबको इकठ्ठा करके हम मैदाने हश्र में ले आयेंगे। लेकिन मेरे ख़्याल में इन अल्फ़ाज़ में यह इर्शाद भी मौजूद है कि जब आख़िरत का वक़्त करीब आयेगा तो बनी इस्राईल को हर कहीं से इकठ्ठा करके एक जगह जमा कर लिया जायेगा। यह लोग हज़रत ईसा अलै. की तकज़ीब करके बहुत बड़े जुर्म के मुरतकिब हो चुके थे। उसके बाद नबी आखिरुज्ज़मान ﷺ की रिसालत को झुठला कर इन्होंने अपने इस जुर्म की मज़ीद तौशीक़ भी कर दी। चुनाँचे अब अल्लाह तआला के नज़दीक इस क़ौम की हैसियत उस क़ैदी की सी है जिसको उसके जुर्म की सज़ा सुनाई जा चुकी हो, मगर उस सज़ा की तामील (execution) अभी बाक़ी हो।

इस सूरत के नुज़ूल के वक़्त बनी इस्राईल के दौरे इन्तशार (Diaspora) यानि फ़लस्तीन से बेदख़ल हुए साढ़े पाँच सौ साल हो चुके थे। पिछली सदी तक भी इनकी कैफ़ियत यह थी कि ये लोग पूरी दुनिया में बिखरे हुए थे। चूँकि किसी इज्तमाई सज़ा या अज़ाब के लिए उनका एक जगह इकठ्ठा होना ज़रुरी था इसलिए क़ुदरत की तरफ़ से इस्राईल की रियासत का क़याम अमल में लाया गया और आयत ज़ेरे नज़र के अल्फ़ाज़ के ऐन मुताबिक़ दुनिया के कोने-कोने से तमाम यहूदियों को इकठ्ठा करके यहाँ आबाद किया गया। अपने ज़अम में तो इन लोगों ने अज़ीम तर इस्राईल (Greater Israel) का मन्सूबा और नक़्शा तैयार कर रखा है और ऐन मुम्किन है इनका यह मन्सूबा पूरा भी हो जाये, मगर बिल्आख़िर यह अज़ीम तर इस्राईल इनके लिए अज़ीमतर क़ब्रिस्तान साबित होगा (वल्लाहु आलम!) आख़री ज़माने में हज़रत ईसा अलै. दोबारा इस दुनिया में तशरीफ़ लायेंगे और आप ही के हाथों इस क़ौम की हलाकत होगी।

अब आख़री आयात में फिर से क़ुरान मजीद का ज़िक्र बड़े अज़ीमुश्शान अंदाज़ में आ रहा है:

आयत 105

وَبِالْحَقِّ اَنْزَلْنٰهُ وَبِالْحَقِّ نَزَلَ ؕ

"और इस (क़ुरान) को हमने हक़ के साथ नाज़िल किया है और यह हक़ के साथ नाज़िल हुआ है।"

यहाँ "हक़" का लफ़्ज़ ख़ुसूसी अहमियत का हामिल है और इस लफ़्ज़ की मायनवी तासीर को वाज़ेह करने के लिए ज़रुरी है कि इसे दोनों दफ़ा ख़ास तौर पर ज़ोर देकर और वाज़ेह करके पढ़ा जाये। इस आयत का अंदाज़ बिल्कुल वही है जो सूरह अत्तारिक़ की आयात में पाया जाता है: {اِنَّهٗ لَقَوْلٌ فَصْلٌ} {وَّمَا هُوَ بِالْهَزْلِ} (आयत 13,14) "यक़ीनन यह (क़ुरान) क़ौले फ़ैसल है और यह कोई हसी मज़ाक़ नहीं है।" इस मफ़हूम की वज़ाहत हमें हज़रत उमर रज़ि. से मरवी इस हदीसे नबवी में मिलती है: ((اِنَّ اللّٰهَ يَرْفَعُ بِهٰذَا الْكِتَابِ اَقْوَامًا وَيَضَعُ بِهٖ آخَرِيْنَ))[23] "यक़ीनन अल्लाह इस किताब की बदौलत कई क़ौमों को उठायेगा और कई दूसरी क़ौमों को गिरायेगा।" चुनाँचे क़ुरान की बरकत से अल्लाह तआला ने मुसलमानों को उरूज बख़्शा और जब हम इसके तारिक (छोड़ने वाले) हुए तो इसी जुर्म की पादाश में हमें ज़मीन पर पटक दिया गया:

ख्वार अज़ महजूरी क़ुराँ शुदी
शिकवा संजे गर्दिशे दौराँ शुदी
ऐ चूँ शबनम बर ज़मीं इफ़्तन्दा-ए
दर बगल दारी किताबे ज़िन्दा-ए

(इक़बाल)

وَمَآ اَرۡسَلۡنٰكَ اِلَّا مُبَشِّرًا وَّنَذِيۡرًا ﴿۱۰۵﴾

"और (ऐ नबी ﷺ) नहीं भेजा हमने आप ﷺ को मगर बशारत देने वाला और ख़बर-दार करने वाला।"

आयत 106

وَقُرۡاٰنًا فَرَقۡنٰهُ لِتَقۡرَاَهٗ عَلَى النَّاسِ عَلٰى مُكۡثٍ

"और क़ुरान को हमने टुकड़े-टुकड़े (करके नाज़िल) किया है, ताकि आप ﷺ इसे लोगों को ठहर-ठहर कर सुनाएँ।"

وَّنَزَّلۡنٰهُ تَنۡزِيۡلًا ﴿۱۰۶﴾

"और हमने इसको उतारा है थोड़ा-थोड़ा करके!"

क़ुरान के मुख़्तलिफ़ अहकाम हालात के ऐन मुताबिक़ मुख़्तलिफ़ मौक़ों पर नाज़िल किए जाते रहे ताकि जिन आयात या अहकाम की जिस वक़्त ज़रुरत हो वही लोगों को पढ़ कर सुनाये जायें। जैसे-जैसे रसूल अल्लाह ﷺ की तहरीक और दावत आगे बढ़ती गई वैसे-वैसे क़ुरान के अहकाम के ज़रिए उसके लिए फ़िक्री रहनुमाई मुहैया की जाती रही। यही वजह है कि पूरा क़ुरान यकबारगी (एक बार में) नाज़िल नहीं किया गया।

आयत 107

قُلۡ اٰمِنُوۡا بِهٖۤ اَوۡ لَا تُؤۡمِنُوۡا ؕ

"आप कह दीजिए कि तुम इस पर ईमान लाओ या ना लाओ!"

اِنَّ الَّذِيۡنَ اُوۡتُوا الۡعِلۡمَ مِنۡ قَبۡلِهٖۤ اِذَا يُتۡلٰى عَلَيۡهِمۡ يَخِرُّوۡنَ لِلۡاَذۡقَانِ سُجَّدًا ۙ﴿۱۰۷﴾

"यक़ीनन वो लोग जिन्होंने इससे पहले इल्म दिया गया था जब यह (क़ुरान) उनको पढ़ कर सुनाया जाता है तो वो अपनी ठोड़ियों के बल सज्दे में गिर पड़ते हैं।"

इस आयत में यहूद के बाज़ उल्मा की तरफ इशारा है।

आयत 108

وَّيَقُوۡلُوۡنَ سُبۡحٰنَ رَبِّنَاۤ اِنۡ كَانَ وَعۡدُ رَبِّنَا لَمَفۡعُوۡلًا ﴿۱۰۸﴾

"और वो कहते हैं कि पाक है हमारा रब, यक़ीनन हमारे रब का वादा तो पूरा होना ही था।"

जब क़ुरान कह रहा है तो इसका मतलब है कि उल्माए यहूद में लाज़िमन कुछ लोग ऐसे होंगे जो इस तरह के ख़्यालात के हामिल होंगे। हिजरत से क़ब्ल रसूल अल्लाह ﷺ की नुबूवत के बारे में इत्तलाआत तो यहूदे मदीना को मिलती रहती थीं। उसके साथ ही क़ुरान की कुछ आयात भी उन तक ज़रूर पहुँच चुकी होंगी। इस पसमंज़र में हो सकता है कि उनके बाज़ अहले इल्म ना सिर्फ़ क़ुरान को पहचान कर अल्लाह के हुज़ूर सज्दे में गिरे हों बल्कि उनकी ज़बानों पर बे-इख़्तियार यह अल्फ़ाज़ भी आ गये हों कि अल्लाह ने जो आख़री नबी भेजने का वादा कर रखा था वो तो आख़िर पूरा होना ही था। यह अल्लाह तआला के उस वादे की तरफ़ इशारा है जो बाइबिल की किताब इस्तसना के अठ्ठारहवें बाब की आयत 18 और 19 में इन अल्फ़ाज़ में आज भी मौजूद है कि ऐ मूसा मैं इनके भाईयों (बनी इस्राईल के भाई यानि बनु इस्माईल) में तेरी मानिन्द एक नबी उठाउँगा और उसके मुँह में अपना कलाम डालूँगा और वो लोगों से वही कुछ कहेगा जो में उसे बताउँगा।

आयत 109

وَيَخِرُّوْنَ لِلْاَذْقَانِ يَبْكُوْنَ وَيَزِيْدُهُمْ خُشُوْعًا ۝

"और वो गिर पड़ते हैं अपनी ठोड़ियों के बल रोते हुए और यह (क़ुरान) इज़ाफ़ा करता है उनके ख़ुशूअ में।"

अब वो दो आख़री आयात आ रही हैं जिनके मुताल्लिक़ आग़ाज़ में बताया गया था कि वो मआरफ़ते खुदावंदी और तौहीदे रब्बानी के अज़ीम ख़ज़ाने हैं। इसके बाद सूरतुल कहफ़ के आख़िर में भी दो आयात आयेंगी जो इन आयात की तरह बहुत अज़ीम हैं।

आयत 110

قُلِ ادْعُوا اللّٰهَ اَوِ ادْعُوا الرَّحْمٰنَ ؕ

"आप ﷺ कह दीजिए कि तुम अल्लाह कह कर पुकारो या रहमान कह कर।"

اَيًّا مَّا تَدْعُوْا فَلَهُ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى ۚ

"जिस नाम से भी तुम पुकारो सब अच्छे नाम उसी के हैं।"

हर ख़ैर, हर ख़ूबी, हर भलाई, हर हुस्न, हर कमाल, हर जमाल, जिसका तुम तसव्वुर कर सकते हो, वह ब-तमाम व कमाल अल्लाह तआला की ज़ात में मौजूद है।

وَلَا تَجْهَرْ بِصَلَاتِكَ وَلَا تُخَافِتْ بِهَا وَابْتَغِ بَيْنَ ذٰلِكَ سَبِيْلًا ۝۱۱۰

"और मत बुलंद करो आवाज़ अपनी नमाज़ में और ना ही बहुत पस्त रखो उसमें, बल्कि उसके बैन-बैन रविश इख़्तियार करो।"

तुम्हारी नमाज़ें और दुआएँ ना तो बहुत ज़्यादा जेहरी हों ना बिल्कुल ही सिर्री, बल्कि इनके बैन-बैन की राह इख़्तियार करो।

आयत 111

وَقُلِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ

"और कह दीजिए कि कुल हम्द और कुल शुक्र अल्लाह ही के लिए है"

यह आयत अपने मज़मून के ऐतबार से सूरह इख़्लास की हमवज़न है। इसमें पाँच मुख़्तलिफ़ अंदाज़ में अल्लाह तआला की अज़मत और तौहीद का बयान है। इस ज़िमन में ये पहली बात है, यानि हुज़ूर ﷺ की ज़बान मुबारका से यह ऐलान कि तमाम तारीफ़ें और हर क़िस्म का शुक्र अल्लाह ही के लिए है।

الَّذِيْ لَمْ يَتَّخِذْ وَلَدًا

"जिसने नहीं बनाई कोई औलाद"

यह दूसरी बात है, जिसे सूरह इख़्लास में {لَمْ يَلِدْ ۙ وَلَمْ يُوْلَدْ} के अल्फ़ाज़ में बयान किया गया है।

وَّلَمْ يَكُنْ لَّهٗ شَرِيْكٌ فِي الْمُلْكِ

"और नहीं है उसका कोई शरीक बादशाही में"

तीसरी बात इक़्तदार व इख़्तियार से मुताल्लिक़ है। अल्लाह तआला तन्हा हर चीज़ का मालिक व मुख़्तार और मालिकुल मुल्क है। उसके अलावा किसी के पास किसी क़िस्म का कोई इख़्तियार नहीं।

وَلَمْ يَكُنْ لَّهٗ وَلِيٌّ مِّنَ الذُّلِّ

"और ना ही उसका कोई दोस्त है कमज़ोरी की वजह से"

यह चौथी बात है कि अल्लाह तआला की दोस्ती को अपनी दोस्तियों पर क़यास ना करो। तुम तो दोस्तियाँ इसलिए पालते हो कि तुम अपने दोस्तों के मोहताज होते हो। इंसान दोस्त इसलिए बनाता है कि वो ज़रुरत के वक़्त काम आयेगा। बाज़ दफ़ा इंसान अपने किसी दोस्त की इन्तहाई नाजायज़ बात सिर्फ़ इसलिए मानने पर मजबूर होता है कि कल वो मेरी भी कोई ज़रुरत पूरी करेगा। इंसान की यही कमज़ोरी उसे दोस्त बनाने और दोस्ताना ताल्लुक़ निभाने पर मजबूर करती है, मगर अल्लाह तआला की ज़ात ऐसी तमाम कमज़ोरियों से पाक है। वो किसी का मोहताज नहीं बल्कि सब उसके मोहताज हैं। चुनाँचे अल्लाह की दोस्ती किसी ज़रुरत की बुनियाद पर नहीं होती और ना ही अल्लाह का कोई दोस्त उससे अपनी कोई बात ज़बरदस्ती मनवा सकता है। पाँचवी और आख़री बात बहुत अहम है:

"उसकी तकबीर करो जैसे कि तकबीर करने का हक़ है।" وَكَبِّرْهُ تَكْبِيرًا

यह तर्जुमा (तकबीर करो) बहुत अहम और तवज्जोह तलब है। सिर्फ़ ज़बान से "अल्लाहु अकबर" कह देने से अल्लाह की तकबीर नहीं हो जाती, इसके लिए अमली तौर पर भी बहुत कुछ करने की ज़रुरत है। ज़बान से अल्लाहु अकबर कहना तो तकबीर का पहला दर्जा है कि किसी ने ज़बान से इक़रार कर लिया कि अल्लाह सबसे बड़ा है। उसके बाद अहम और कठिन मरहला अपने तमाम इंफरादी और इज्तमाई मामलात में अल्लाह को अमली तौर पर बड़ा करने का है। यह मरहला तब तय होगा जब हमारे घर में भी अल्लाह बड़ा तस्लीम किया जायेगा और घर के तमाम मामलात में उसी की बात मानी जायेगी, जब हमारी पारलियामेंट में भी उसकी बड़ाई को तस्लीम किया जायेगा और कोई क़ानून उसकी शरीयत के ख़िलाफ़ नहीं बन सकेगा, जब हमारी अदालतों में भी उसकी बड़ाई का डंका बजेगा और तमाम फ़ैसले उसी के अहकामात की रौशनी में किए जायेंगे। गर्ज़ जब तक हर छोटे-बड़े मामले में और हर कहीं उसका हुक्म आख़री हुक्म के तौर पर तस्लीम नहीं किया जायेगा, अल्लाह की तकबीर का हक़ अदा नहीं होगा। अल्लाह के अहकाम को अमली तौर पर नाफ़िज़ करने वालों के लिए सूरतुल मायदा का यह हुक्म बहुत वाज़ेह है: {وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللهُ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ} {فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ....} {....فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ} आज हमने अल्लाह को (नऊज़ु बिल्लाह) अपने तैं मस्जिदों में बंद कर दिया है कि ऐ अल्लाह आप यहीं रहें, यहीं पर आकर आपकी तकबीर के तराने गायेंगे, आप की तस्बीह व तहमीद करेंगे। लेकिन मस्जिद से बाहर हमारी मजबूरियाँ हैं। क्या करें मार्केट में माली मफ़ादात के हाथों मजबूर हैं, घर में बीवी बड़ी है, किसी और जगह कोई और बड़ा है। ऐसे हालात में हमारे यहाँ अल्लाह की तकबीर का मफ़हूम ही बदल कर रह गया है और अब तकबीर फ़क़त दो अल्फ़ाज़ (अल्लाहु अकबर) पर मुश्तमिल एक कलमा है, जिसे ज़बान से अदा कर दें तो गोया अल्लाह की बड़ाई का हक़ अदा हो जाता है।

بارک اللہ لی و لکم فی القرآن العظیم و نفعنی و ایا کم بالآیات والذکر الحکیم۔